# हितशिक्षा.

(१). जैसे सूर्यके उदय होते ही सब स्थानका अंधकार नाश हो जाता है इसी प्रकार पवीत्र भावनासे सब दोष दुर्गुण दुःख और पापोंका नाश हो जाता है।

(२) जिस स्थान पहूँचना है उस दिशाके तरफ सिध चलनेसे शिघ्र अटवी उल्लंघन हो जाती है. उसी प्रकार शुद्ध भावनारूपी सत्य दिशा मीलनेसे दुःखरूपी विशाळ वनको शिघ्र पार हो जाते हैं।

(३) आत्मकल्याणकी इच्छा होवे तो हमेशां उत्तम भावनाका चिंतवन करें, जिसके द्वारा सदाचार प्राप्त होकर इस लोक और परलोक संबंधी सब दुःखोंका नाश होवेगा।

(४) यह भावनाओं आप स्वयं पढें दूसरोंको सूनावें व पढनेके लिये देवें।

(५) हर समय जीव कुछ और कुछ विचार करता ही रहता है और हर समय कर्मोंका (संस्कारका) बंधन होता है इसलिये उत्तम भावना चिंतवन करके पवित्र विचार ही करना चाहिये।

(६) कीसी देश कीसी समय कीसी स्थान कीसी हालतमें ये भावना वांच सकते हैं। सुन सकते है। व चिंतवन कर सकते है। कारण आत्मा उपयोगहीन होता ही नहिं तो शुद्ध उपयोगका कारण उत्तम भावना हर कीसी समय भासकते है इसमें कोई मंत्रात्तर नहिं है शुद्ध आत्मकल्याणके तत्त्व अनेक शास्त्र व पूर्वाचार्योंके वचनानुसार देशभाषामें एकत्र किये है ये सब धर्म व सब संप्रदायके पढनेयोग्य है कारण इसमें कोई धर्म व संप्रदायको बाधक विषय लिया हि नहिं गया।

# आत्मजागृति भावना

## प्रचारार्थ सहायक.

इस पुस्तक की २००० प्रतियां छपाने में नीचे लिखे सज्जनों ने कुल खर्चा सहायतार्थ दिया है इसलिये धन्यवाद है।

श्रीमान् राजमलजी गणेशमलजी भाछा चंगलपेट
,, दीपचन्दजी मरलेचा चंगलपेट
,, चोथमलजी केसरीमलजी मरलेचा चंगलपेट

निवेदक—मगनमल जैन.

# भावनाओंकी महिमा.

(१) इस पुस्तकमें जो नवकार मंत्र अर्थ और भावनाके साथमें है उसको अच्छा तरह पढकर मनन करनेसे नवकार मंत्रके जो गुण हमारे अन्दर शक्तिरूप (छुपे हुए ) है वे पकट होते है और अपना आत्मा परमेष्टिरूप बनता है । सब मंगलमें सर्वोत्कृष्ट मंगल यही है.

(२) सदा सुबुद्धि और समता भाव प्रकट करनेके लिए मैत्रि आदि चार भावना है और उन भावनाओं ही से समकित गुण प्रकट होता है और वह गुण प्रकट होनेके बाद ( समकितगुण ) हमेशा स्थिर रहता है इस भावनाके विना सम्यकत्व और चारित्रमें स्थिर नहीं रहा जाता.

(३) आत्माकी मूल सत्ता मिथ्यात्त्व मोहसे दबी हुइ है । समकित (आत्मबोध) भावना भावनेसे यह आत्माकी मूल सत्ता प्रकट होती हैं । जहा तक केवल ज्ञान उत्पन्न नहो वहातक यह समकित भावना हमेशा तीनवार जरूर भावनी चाहिये क्योंकि सब तीर्थंकरोंने मिथ्यात्त्व मोहका नाश यह समकित भावना भावने से ही किया है । ऐसा पूर्वाचार्य महाराजने फरमाया है । इसलिऐ मुमुक्षु खुद विचार सकता है कि इस भावनाको भावनेकी कितनी आवश्यकता है ।

(४) मिथ्यात्त्व नाश करनेकी भावना अपना अनत चतुष्टय रूप प्रकट करनेवाली तथा महा मोहको नाश करनेवाली है.

(५) सद्गुण प्राप्तिकी वहत्तर भावना आलयणा (पापोंकी शुद्धि) रूप है और वह अनादिकालके मिथ्यात्त्व आदिसे बांधे हुए कर्मोंको नाश करनेके लिये वज्र समान है.

(६) बारह वैराग्य भावनासे ही श्री तीर्थंकर भगवानने अविचल सुखकी प्राप्ति की है विषय वासनाओंकी शाति इन भावनाओंके चिंत्वन करनेसे होती है.

(७) श्री ठाणागर्जी सूत्रमें फरमाया है कि हमेशा तीन मनोरथका चिंत्वन करनेसे अपूर्व लाभ ओर कर्मोका नाश होता है.

(८) साधुसाध्वीकी भावना तीन लोककी सम्पदा प्रकट करानेवाली अर्थात् निर्वाण पद देनेवाली है.

(९) चोदह नियम मेरु (पर्वत) जितना पाप घटा करके राई जितना रखनेवाले हैं। मूलीकी सजासे बचाकर मूईकी सजा रखने वाले है.

(१०) पात्रापात्रकी भावना अद्‌भूत भावना है.

(११) यह विद्यार्थीकी भावना ऐसी है कि हजारों कलाचार्यों और विद्याचार्यो के पास पढनेसे भी जो अतरंग सद्‌गुण प्राप्त नहीं होता है वह इस भावनाके भावनेसे होता है.

(१२) दिनचर्याकी इक्कीस भावना से वर्तमानमें बंधते हुए तीव्र कर्मोकी आलोयणा होती है और ये आश्रवमें संवर गुण उपजानेकी अद्‌भूत जडी बूटी है इसका मर्म विद्वान और ज्ञानी पुरुषही समझ सकते हैं.

(१३) विवाहकी इच्छा करनेवाले और विवाहित स्त्री पुरुषोंकी भावना ऐसी है कि हजारो ग्रंथ वांचने, सुननेसे तथा हजारो डाक्टर हकीम, वैद्योकी सलाहमे लाभ नहीं है वह लाभ इस भावनाको भावनेसे होता है ओर यह भावना शरीर सुधार जीवन सुधार, धर्मसुधार, और मनुष्य जन्मके सार्थक करनेके लिए अलौकिक वस्तु

है। इसको छः मास भावने पर अपनी आत्मामें अद्‌भूत शक्ति प्रकट होने से इसका अनुभव आपसे आप हो जायगा.

(१४) विवाहकी इच्छाकरनेवाले और विवाहित स्त्री पुरुषों के लिए सुशिक्षा—शरीरकी आरोग्यता सबलता और भविष्यमें महा दुःखोसे बचकर शांतिमय, धर्ममय जीवन गुजारनेके निमित्त जडी बूटी और पारसमणिके समान है।

(१५) गृहस्थाश्रमियोंकी भावना सोनेकी खान और रसकूं-पीके समान है.

(१६) विधवा और विधुरकी भावना आर्त—रौद्र महा भयंकर दुर्ध्यानोंको नाश करके सात्विक जीवन बनानेवाली है तथा कुकर्मो, बालहत्या और अनेक दुराचारों से छुडानेवाली है।

(१७) व्यापारीकी भावना—अन्याय अनीतिका मार्ग छुडाकर न्याय और नीतिके मार्गपर लानेवाली है.

(१८) ब्रह्मचर्य प्राप्ति और रक्षाकी भावना तो खास ब्रह्म अर्थात् परमात्मा बनानेवाली है.

(१९) नौवाडे किलेके समान है जिसे विषयवासना रूपी राक्षसी हानि नहीं पहूँचा सकती और ब्रह्मचर्य सुरक्षित रहता है.

(२०) निरोगी होनेकी भावना—अनंतकालका असाध्य रोग मिटाकर अविनाशी सुख देनेवाली है.

समकरस ये भावनाएँ भावनसे और गुण प्रकट करनेसे तीर्थंकर पदकी पात्रता मिलती है। व्यवस्थापक,

वेलाभाइ प्राणलाल शाह.

ओ. मेनेजर—श्री जैन सस्तु साहित्य प्रचारक कार्यालय

कलोल. ( उ. गु. )

॥ ॐ सिद्धेभ्यो नमः

# आत्मजागृति भावना

( हमेशां नित्यनियममें वांचन मनन करनेकी भावना )

## (१) आत्मकल्याण करनेका सरल उपाय

## ( भावनाका स्वरूप और फल )

(१) सकल शास्त्र पढनेका सार "आत्माके सत्य स्वरूपको समझकर उसे प्रगट करना" है यह "आत्मजागृतिकी भावनाएँ" आत्मस्वरूपको प्रगट करनेका उत्तम साधन है.

(२) सर्व ज्ञानी पुरुषोंने मोक्ष अर्थात् छोटे तथा बडे सब तरहके दुःखोंसे छूटनेका उपाय एक ही बताया है. और वह एक सम्यज्ञान व दूसरा सच्चरित्र है जितने प्रमाणमें ज्ञान तथा चारित्र पवित्र होता है, उतने प्रमाणमें दुःख दूर होते है. "ज्ञान क्रियाभ्याम् मोक्षः" ज्ञान और क्रियासे मोक्ष अर्थात् दुःख रहित बन सकते है. मेरा सत्य स्वरूप क्या है और मेरा कर्तव्य क्या है उसकी भावना करनेसे (वारंवार विचारनेसे) सत्यज्ञान और सच्चारित्र प्रगट होते हैं.

(३) भावनाकी प्रबलतासे उत्कृष्ट आत्मोन्नति करनेका स्थान मनुष्य जन्म होनेसे सब जातिके जन्मोंसे मनुष्य जन्म

श्रेष्ठ माननेमैं आया है कारण परम शुद्ध भावना अर्थात् परम शुक्ल ध्यान द्वारा केवळ ज्ञान केवळ दर्शन अनंत आत्मिक सु- मनुष्य भवमें ही प्रगट हो सकते है.

(४) एक मनुष्य भवके पीछे असंख्यात नारकीके भव एक नारकीके भव पीछे असंख्य देवताके भव (तिर्यंच गतिमैं से परवश वेदनासे हलके देव अनेकवार होनेसे) और एक एक देव भव पीछे अनंत तिर्यंचके भव करने पडतें है. ऐसा अमूल्य दुर्लभ मेरा मनुष्य भव जो खानपानमैं इन्द्रियोंके विषयसुखमें और प्रमादमें जावेगा तो पश्चातापका पार नहिं रहेगा. इस लिए उत्तम भावनाएँ हमेशां चिंत्वन कर सद्गुण प्रगट करके सच्चारित्र द्वारा जीवन सफल करना चाहिये.

(५) शुद्ध भाववाली बलवान भावना कार्यकी आधीसे ज्यादा सिद्धि है और पुरुषार्थ करनेसे पूर्ण सिद्धि मीलती है. हरेक विजयको जन्म देनेवाली विजयकी माता दृढ भावना ही है.

(६) जैसा बीज वैसा वृक्ष उत्पन्न होता है उसी प्रकार जैसे विचार वैसा चारित्र बनता है इस लिये अशुभ विचारोंको छोड़कर सदा सुविचार ही करना चाहियें. विचार (भावना) ही चारित्र घड़तें हैं.

दोहा–शुद्ध भावसो तीर्थ है. उत्तम और अद्भूत।
स्नान करी उस तीर्थमैं, त्यागुं मेल अखूट ॥१॥
है नीच जो भावना, नीचा पद पमाय॥ ।

लोहेसे लोहज बने, कंचन कहांसे थाय. ॥२॥
परम आत्मकी भावना, शुद्ध भावसे थाय; ।
परमपदको लावती, कारण भाव जणाय ॥३॥
भावे धर्म आराधियें, भावे धरीयें ध्यान ।
भावे भावो भावना, भावे केवळ ज्ञान ॥४॥
अशुद्ध भावसे बंध है, शुद्ध भावसे मुक्ति ।
जो जाने गति भावकी, सो जाने यह युक्ति ॥५॥
जगमां मोटी भावना, भावो हृदय मोझार ।
भावथकी भव नीधि तरे, पावे भवनो पार ॥६॥

(७) भावनाके अनुसार जीवन बनता है. ऐसा जानकर आजसे में हरकिस्मकी उत्तम भावना ही विचारुंगा, जो मनुष्य मै दुःखी हूं, रोगी हूँ, अशक्त हूँ, वृद्ध हो जाउँगा. सफलता नहीं मीलेगी इत्यादी हलके विचार करता है वह वैसा ही बन जाता है और जो मनुष्य ऐसा विचारता है कि मै सुखी हूँ. निरोगी हूं. शक्तिमान हूँ, सदा युवान बना रहूंगा. सब इष्ट कार्यमें सफलता ही पाउंगा. इत्यादि उत्तम विचार करता है वह वैसे ही उत्तम फल पाता है. अहिंसा, सत्य, इमानदारी, परोपकारके, विचारोसें वैसे गुण प्रगट (प्राप्त) होते है, इस लिंये मै सदा सद्गुणके ही विचार करुंगा कारण—

जं अब्भसेइ जीवो, गुणं च दोसं च इत्थं जम्मंमि ।
तं पावेइ पुण्णभवे, अब्भासेण पुणो तेण ॥ १ ॥

अर्थ—जो जो गुण अगर दोष इस जन्ममें धारण करते

है वैसेही गुणदोष प्रायः पुनर्जन्ममें पूर्व अभ्याससे वे शिघ्र उत्पन्न हो जातें है. इस लिये सद्गुणको ही मैं धारण करुंगा।

(८) कर्मोका बंधन तथा नाश भावोंके अनुसार ही हर समय होता रहता है. सोते, जागते, चलते, बेठते, हर समय कर्म बंधते है (संस्कार पडतें है) राग द्वेष मोह रहित निर्मल भावोंसे अनंत अशुभ कर्म नाश होतें है जब कि राग द्वेष मोहके विचारोंसे अनंत अशुभ कर्मोका बंध होता है.

प्रसन्नचन्द्र राजऋषिजीने अशुभ भावनासे सातमी नर्कमें जावे उतने कर्मोका बंध कीया और तत्काल शुद्ध भावना चिंत्वन की तो सब कर्मोका नाश करके केवल ज्ञान प्रगट किया.

तंदुल मच्छ (चावल जीतना वडा शरीर है) अशुभ विचारोंसे दो घडीके छोटेसे आयुष्य मे सातमी नारकीमें चला जाता है यदि थोडी देरके खोटे विचार भी इतने दुःखवर्धक है तो मैं अनेकबार बुरे विचार करता हुं मेरी क्या दशा होवेगी ऐसा विचार करके जो अशुभ विचार आते है उन्हें धिक्कार देकर मुझे सुविचारमें दाखिल होना चाहिये.

सुविचारही अनंत सुखका कारन है और कुविचार ही अनंत दुःखोंसे भरपुर है.

दोहाः—महा दुःखका बीज है. अशुभ रुप परिणाम;
ताके उदय अनंत दुःख भुगते आतमराम ॥१॥

(९) "सुख" यह जीवका मुख्य गुण है, स्वभाव है वह गुण अज्ञान तथा मोहसे मलिन होनेसे इस मेरे आत्माको

आत्मिक सुख भूलकर इंद्रियजन्य भोग (बाह्य पदार्थ) में सुख दुःखका अनुभव होता है. शुभ भावोंसे बाह्य सुख और अशुभ भावोंसे बाह्य दुःख उत्पन्न होता है. जब शुद्ध भाव अर्थात् राग द्वेष मोह रहित परिणाम (आत्मध्यान–आत्म रमणता) प्रगट होतें है तब बाह्य सुख दुःख तथा उसके कारन पुण्य पाप प्रकृतिका नाश होकर यह आत्मा अनंत अव्याबाध आत्मिक सुख पाता है.

रोग, शोक, चिंता, भय, जन्म. जरा. मरण. दुःख मात्र अशुभ भावनाका फल है और इन सकल दुखोंसे छूटनेका उपाय एक उत्तम भावना है. उत्तम भावनासे पूर्वके बंधे हुए अशुभ कर्म पलटाए जा सकतें है. उसका नाम शास्त्रमें "संक्रमण" अर्थात् कर्मोका परिवर्तन कहा है.

शुभ भावनासे अशाता वेदनी शातारुप बनती है, पाप-प्रकृति पुण्यरूप होती है, अशुभ कर्मोकी लंबी स्थिति घट जाती है. तीव्र रस (अतिशय दुःख) मंद रस (अल्प दुःख) होता है. बहुत कर्म पुंज अल्प हो जातें है. इसी प्रकार बुरी भावनासे शुभकर्म शातावेदनी पुण्य प्रकृतिका नाश भी होता है और पाप प्रकृति वढ जाती है ऐसी शिक्षा पाकर मैं सदा उत्तम भावना विचारुंगा और उत्तम भावना किस तरह कहां विचारना ऐसी जागृति करानेवाली इस आत्मजागृति भावना को हमेशां नित्य नियमके वांचन मननमें रक्खुंगा.

रोगीको यह भाव औषध है इस भावनासे द्रव्यमे रोग

शांति होवेगी तथा भावमें अशुभ कर्मोंका नाश होवेगा. शारीरिक मानसिक, कौटुम्बिक, व्यापारजन्य तथा जीवन निर्वाहके हरेक दुःखोंका नाश करनेका सरल उपाय यह पवीत्र भावना है: इन सब दुःखोंका मूल कारण मेरी मलिन भावना है, इन सब दुःखोंका नाश करनेका सरल उपाय यह पवीत्र भावना है, जिनको भाकर मैं सत्य सुख प्राप्त करूंगा.

(१०) वृक्ष भी दूसरेकी भावनासे फलता है. तथा सुकता है ऐसा विज्ञान शास्त्री श्रीजगदीशचंद्र बोझने प्रत्यक्षमें दिखाया है तो वनस्पति जीवोंसे अनंत गुण विशेष ज्ञानशक्ति जिसको प्रगट हुइ है ऐसी मेरी आत्मा अपने खुद कोही उत्तम भावनासे आत्म उन्नति करे यह यथार्थ है. जिज्ञासु पाठक ! इन भावनाओंमेंसे १ श्री नवकार मंत्र, २ समकितके चार गुण, ३ समकित प्रगट करनेकी छत्तीस भावनाएं. ४ सद्-गुण प्राप्ति तथा दुर्गुण नाशकी बहोत्तर भावनाएँ और अंतके काव्य इतना तो अवश्यमेव रोज एकाग्र चित्तसे पढा करें और कुछ गुण चारित्र में धारन करें तथा अन्य भावनाएं अपने जीवनको शिक्षादायी होवे वे पढें.

इन भावनामें जो उत्तमता है वह ज्ञानीओंकी प्रसादी लेकर धरी है जिससे उनही महा पुरुषोंका उपकार मानतें है. और जो भूल होवे सो लेखककी अल्पज्ञता है इसलिये अज्ञान क्षय होकर प्रतिपूर्ण ज्ञान प्रगट होओ ऐसी भावना करतें है.

## (२) श्री नवकार मंत्र, अर्थ और भावना सहित.

(१) नमो अरिहंताणं:-श्री अरिहंत देवको नमस्कार करता हूँ. "नमो" अर्थात् नमस्कार करता हूं अरि अर्थात् शत्रु क्रोध, मान, माया, लोभ, राग द्वेष, मोह, अज्ञान, मिथ्यात्त्व, विषय, प्रमाद आदि अंतरंग शत्रुओंका सर्वथा "हंताणं" अर्थात् नाश किया है ऐसे प्रभुको नमस्कार करता हूं. मैं भी क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, मोह, अज्ञान, मिथ्यात्व, विषय, प्रमाद आदि अंतरंग शत्रुओंका नाश करूंगा. वह दिन धन्य होउंगा. संसारमें मुझे कोई दुःख नहीं दे सकता. सिर्फ मेरी आत्मा स्वयं क्रोधादिद्वारा दुःख देनेवाला शत्रु बन जाता है, और क्रोधादि दोष त्यागनेसे आत्मा स्वयं परम सुख देनेवाला मित्र बन जाता है। 'जब ऐसी भावना भाकर क्रोधादि भाव शत्रुओंका नाश करूंगा तब सब दुःखोंसे छूट-कर मैं परम सुखी बनूंगा. ये क्रोधादि भाव-शत्रुओंका नाश होनेसे मैं भी अरिहंत हो सकूंगा. इस लिये अब मुझे शीघ्र इन क्रोधादि शत्रुओंके नाश करनेका प्रयत्न क्षमादि गुणद्वारा करना चाहिये।

(२) नमो सिद्धाणं-श्री सिद्ध भगवानको नमस्कार करता हूं. जिन्होंने आत्माके सब आवरण दूर किये हैं, सब कर्म नाश किये हैं, और जिन्हें अनंत गुण प्राप्त किये हैं ऐसे सिद्ध भगवानको नमस्कार करता हूं।

आत्माके आठ गुणोंको ढांकनेवाले आठ कर्म हैं उन्हें नाश करनेवाली भावनाएँ।

(१) ज्ञानावरणीय कर्म का नाश होकर अनत ज्ञान गुण प्रगट हो.

(२) दर्शनावरणीय कर्मका नाश हो और अनंत दर्शन गुण प्रकट हो.

(३) मोहनीय कर्म नाश होकर अनत आत्मिक सुख क्षायिक सम्यक्त्व और वीतराग चारित्र गुण प्रकट हो.

(४) अंतराय कर्म क्षय हो और अनंत आत्मिक वल प्रगट हो.

(५) वेदनीय कर्म नाश हो और अनंत अव्यावाध सुख प्रगट हो.

(६) आयुष्य कर्मवंधन दूर होकर अजर, अमर, गुण प्रगट हो.

(७) नाम कर्म दूर होकर अरूपी अवस्था मिले.

(८) गोत्र कर्म नाश होकर अगुरु लघु गुण प्रगट हो.

सब कर्म क्षय होकर आत्मिक अनंत गुण प्रकट हो।.

(३) नमो आयरियाणं:-नमस्कार करता हूं श्री आचार्य महाराजको जो पांच आचार स्वयं पालते है तथा औरों से पलाते है ऐसे आचार्य महाराजश्रीको वंदना नमस्कार करता हूं। ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चारित्राचार, तपाचार और वीर्याचार ये पांच आचारका जिस दिन मैं पालन करूंगा वही दिन धन्य होगा.

(४) नमो उवज्झायाणं:—श्री उपाध्यायजी महाराजको वंदना नमस्कार करता हूं। जिस दिन मैं भी ग्यारह अंग बारह उपांगका ज्ञाता बन सम्यक्त्व सहित उपाध्यायके गुण प्राप्त करूंगा वह दिन धन्य होगा।

(५) नमो लोए सव्व साहूणं सर्व साधुजी महाराजको नमस्कार करता हू. हिंसा, विषय, कषाय मुझसे छूटे और अहिंसा, संयम, समभाव (अकषाय) गुण मुझे प्राप्त हों वही दिन मेरा सार्थक है.

पंच पदके ये सब गुण मेरी आत्मामें भरे है. ये सब गुण मुझमें प्रगटे।

(१) तत्वोंका विशेष २ ज्ञान प्राप्त करूं तथा अज्ञान और मिथ्यात्व त्याग सम्यक् ज्ञान और सम्यक्त्व गुण धारण करके हिंसा, विषय, कषाय, क्रोधादि त्याग आत्माका हित कल्याण और श्रेय करनेके लिये साधुसंयमी बनूं.
(२) साधुपदके गुण प्राप्त कर विशेष ज्ञान शक्ति और ध्यान द्वारा उपाध्याय बनूं.
(३) अतिशय ज्ञान प्राप्त कर श्रेष्ठ चारित्र पाल आचार्य पद प्राप्त करूं।
(४) उत्कृष्ट ज्ञान और संयमद्वारा राग द्वेष मोहका सर्वथा नाश कर अरिहंत बनूं.
(५) अंत समय सब कर्म क्षय कर सिद्ध पद प्राप्त करूं.

ये पांचों पदके गुण मेरी आत्मामें स्थित है उन्हें प्राप्त

करनेकी मैं इच्छा रखता हूं और पुरुषार्थसे इन पांचो प्रभुके तुल्य बन सक्ता हूं.

## (३) नमस्कारके प्रकार और फल.

दोहा

वार वार प्रभु वंदना, शुद्ध भावे कराय।
कारण सत्ये कार्यनी, सिद्धि निश्चय थाय ॥१॥

भावार्थः—हमेशां वारम्वार जो भाव वंदना करते हैं अर्थात् प्रभुके समान गुण अपनी आत्यामें भरे है ऐसी भावना लाकर इन गुणोंको प्रकटाते हुए जो वंदना करते हैं वे खुद प्रभु बन जाते हैं। जिन्हें निमित्त कारण सत्य मिल जाता है और जिनके भाव शुद्ध रहते हैं उनकी सिद्धि अवश्य होती है।

(१) द्रव्य नमस्कार—मनकी एकाग्रता किये विना जो वचनसे स्तुति और कायासे नमस्कार करता हैं, उनका वचन और कायासे लगता हुआ पाप रुक जाता है और थोडा पुण्य होता है.

(२) व्यवहार नमस्कारः—मन एकाग्र रख जो ज्ञान, चारित्रादि गुणोंकी स्तुति और नमस्कार करते हैं उन्हे अत्यंत निर्मल पुण्यकी प्राप्ति होती है और शुद्ध उपयोग (राग द्वेष, रहित परिणाम) होने उतनी निर्जरा (कर्मोंका नाश) होती है।

(३) भाव नमस्कारः—प्रभुके समान मेरी आत्मामें भी सब गुण मौजूद है उन्हें प्रकटानेके लिये प्रभुके समान ही

ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप धर्म में आदरूं ऐसी दृढ भावना लानेवालोंको बहुत निर्जरा [कर्म नाश] होती है।

(४) निश्चय नमस्कारः—जो राग द्वेष रहित होकर स्वयं प्रभुके समान अपना स्वरूप समझ आत्मध्यानमें मग्न रहता है वह प्रभु बन जाता है, मोक्ष प्राप्त करता है।

दोहा

साधन साधी जुदानको। मानें एक बनाय॥
सो निश्चयनय शुद्ध है। सुनत करम कट जाय॥ १॥

नमन करना, नमस्कार करना अर्थात् हम जिन्हें नमस्कार करते हैं उनके समान बनते है इस लिये हमें सद्गुणी और पवित्रात्माओंको हमेशां नमस्कार करना चाहिये.

## (४) समकितको प्रगट करनेवाले चार गुणोंकी भावना.

मोक्षका बीज सम्यक्त्व और सम्यक्त्वका मूल कारण चार भावनाएँ हैं. इस लिये हमेशां उनका चिन्त्वन कर चारों सद्गुण प्राप्त करना चाहिये. ये गुण प्रकट होनेके पश्चात् सम्यक्त्व प्राप्त होती है।

दोहा

गुणीजनोंको वंदना, अवगुण देख मध्यस्थ,
दुःखी देख करुणा करे, मित्र भाव समस्त ॥१॥

[१] प्रमोद भावनाः—हमेशां गुणानुरागी बनना। दूसरोंके

सद्गुण देख खुशी होना और विचार करना कि मुझमे भी ये गुण प्रकटें.

[२] माध्यस्थ भावनाः-समभाव दूसरोंके दोप देख क्रोध, द्वेप करना नहीं परंतु ऐसे दोपोंसे अपनी आत्मा बचे ऐसा उपाय करना। सुखमें खुशी और दुःखमें रंज न लाना. हमेशां राग द्वेप रहित समभावमें रहना ऐसी शक्ति प्रकटे ऐसी भावना वारंवार करना चाहिये.

दोहाः

" दुर्जन क्रूर कुमार्ग रतों पर, क्षोभ नहीं मुझ को आवे;
साम्य भाव रहे सदा उनपर, ऐसी परिणिति हो जावे ॥ १ ॥

(३) करुणा भावनाः-शारीरिक और मानसिक दुःख दूर करना यह द्रव्य करुणा है और क्रोध, मान, माया, लोभ मिथ्यात्व छुडाना यह भाव करुणा है. जिस दिन मैं अपनी और दूसरे आत्माकी भाव दया करूंगा वही दिन धन्य होगा। पापों से स्वयं बचना और दूसरों को बचाना यही भाव करुणा है. इस से अत्यंत लाभ होता है और सच्चा सुख मिलता है।

(४) मैत्री भावनाः-संसार के समस्त जीवों को अपने समान समझकर किसी भी जीव की हिंसा नही करना, सब का भला चाहना. यही स्व-पर द्रव्य मैत्री भावना है। और अपनी आत्माके सच्चे मित्र बनकर अपने अज्ञान मिथ्यात्व कपाय को त्याग सम्यक् ज्ञान दर्शन चारित्रका आराधन

करना यह स्वभाव मैत्री भावना है. मुझे इन चारों भावनाओं के गुणोकी प्राप्ति हो।

चार भावना पर हरिगीत छंद.

सौ प्राणी आ संसारना, सन्मित्र मुझ व्हाला थजो,
सद्गुणमां आनंद मानूं, मित्र के वेरी हजो।
दुःखीया प्रति करुणा, और दुश्मन प्रति मध्यस्थता,
शुभ भावना प्रभु चार आ, पामो हृदयमां स्थिरता ॥१॥

भावार्थः-(१) मैत्री भावनाः-संसारके सब जीवोंको मैं मेरे परम मित्र समझ सबका भला चाहताहूं और उनके सब दुःख दूर हों एसी इच्छा करता हूं।

(२) प्रमोदः-गुणानुराग भावना-मेरा भला करने वाला मित्र या दुःख देनेवाला शत्रु दोनो के गुण देखाता हूँ कारण मित्रने सद्गुण पुष्ट कीया है और शत्रुने दोष से बचनेकी तथा सत्य में दृढ रहने की प्रेरणा की है।

(३) करूणाः-दुःखी के दुःख दूर करनेमें सदा तत्पर रहना, सच्चा दुःख अज्ञान मिथ्यात्त्व, और कु चारित्रको समझ उनसे अपनी आत्माको दूर रखना और दूसरोकी आत्माको बचाना।

(४) माध्यस्थः-समता भावना-सब जीव और सब अवसर पर समभाव रखना।

ये चार भावनाएँ सदा विचार इन गुणोंको प्रगट करुं यही मेरी इच्छा है।

जीव हमेशां भावना अर्थात् विचार तो करता ही है परंतु अशुभ भावना ज्यादा रहती है इस लिए भावनाका स्वरूप समझकर शुद्ध भावनाका चिन्तन करना चाहिये. इन चार भावनाके हरेकके चार चार भेद है।

[१] मैत्रि भावना-[१] मोह मैत्रि-स्त्रि, पुत्र, धन, भोगादि कि बाह्य आनंदकि अपेक्षासे प्रीति [२] शुभ मैत्रि उपकारी सज्जन आदि प्रति प्रीति भक्ति तथा उत्तम काममें ऐक्य [३] शुद्ध साधन मैत्री देव गुरु धर्म व ज्ञान दर्शन चारित्र प्रति भक्ति व मैत्रि. [४] शुद्ध मैत्रि अनंत ज्ञानादि निज गुणोसे मैत्री-एकताका अनुभव। हे चेतन! तूं ही तेरा मित्र है,-क्यों अन्य में ममत्त्व करता है। [आचारांग सूत्र]

[२] प्रमोद भावना-[१] मोहजन्य हर्ष-स्व-परको भोगोपभोगकी प्राप्ति में आनंद [२] शुभ हर्ष-दान, पुण्य, सेवाभाव, नैतिक गुण व सुविद्या स्व-परको प्राप्त होने में हर्ष. [३] शुद्ध साधन हर्ष सम्यक् ज्ञान दर्शन चारित्रकी स्व-परको प्राप्तिमें आनंद. (४) शुद्धानंद-आत्मिक सुख अविकारी अतींद्रिय निर्विकल्प निज सुखमें लीन होना.

(३) करुणा भावना-[१] मोहजन्य करुणा-स्व-परको भोगोपभोग धन, वैभव, प्रशंसा आदि प्राप्त न होने में दुःखी होना [२] शुभ करुणा-शारीरिक व मानसिक पीडासे दुःखित देखकर करुणा करना [३] शुद्ध साधन करुणा-अज्ञान,

मिथ्यात्व, विषय कषायसे स्व-परको सदा अनंत दुःखी होता जान ये दोष त्याग सम्यग् ज्ञान दर्शन चारित्र विषय संयम व समभाव गुण प्रकट करना तथा प्रकट करवाना. [४] शुद्ध करुणा-स्वस्वभाव [आत्म स्वरुप] मै लीन रहना. ज्ञानादि निजगुणकी मलीनताही दुःख हेतु जान आत्मगुणोकी शुद्धि करना।

[४] माध्यस्थ भावना-[१] मोहजन्य समभाव-लज्जा, भय, लोभ, स्वार्थ या अज्ञानवश शांति धरना [२] शुभ समभाव-ऐक्य, सहनशीलता. गुणानुराग, गंभीरताके गुण तथा कलह, कुसंप, वैरभाव, विरोध के नुकशान विचारकर समभाव धरना. [३] शुद्ध साधन समभाव-राग द्वेष करनेसे भाव हिंसा होती है। मै शब्द, रुप, गंध, रस, स्पर्श, मन, वचन, काया, कषाय, कर्मरहित हूं। मै अनंत ज्ञान, दर्शन, सुख, शक्ति स्वरूप हूँ। ऐसी भावना विचार कर समभाव धरना [४] शुद्ध समभाव परम समरसी भाव वीतराग भाव सम-भाव ही मेरा निज गुण है मै क्यो विकार पाउँ क्यां राग द्वेष लाउँ ऐसा विचारके निज स्वरूपमै लीन होवे।

चारों भावनामै मोहजन्य पहिला भेद इस लोक तथा परलोकमैं दुःखदायी है व पापबंध हेतु है। और दूसरा शुभ भेद इस लोक तथा परलोकमै बाह्य सुखदायी व पुण्य प्राप्ति का कारण है। तीसरा शुद्ध साधन नामा भेद इस लोक तथा परलोकमै बाह्य तथा आभ्यंतर दोनों सुखदाई व बहुत कर्म

भयका कारण है। और शुद्ध नामा चौथा भेद इस लोक तथा परलोकमें परम सुखदायी व मोक्ष प्राप्तिका प्रधान कारण है।

## (५) समकित ( आत्मदर्शन—सत्यश्रद्धा )

### गुण प्रकट करनेवाली ३६ भावनाएं.

अपनी आत्मा अनादि काल से सम्यक्त्व भावना न लाने से अनंत जन्म मरण के दुःख भोग रही है जिस प्रकार सूर्योदय होते ही सब जगह से अंधकार नष्ट हो जाता है उसी प्रकार सम्यक्त्व गुण प्रकट होने ही सब प्रकारके दुःख और दोष नष्ट हो जाते हैं.

ज्ञानी मनुष्य सादा भोजन [ रोटी, छाछ और कढी ] में ही सुख मानता है पर अज्ञानी या विलासी मनुष्य अनेक प्रकारके भोजन मिलने पर भी एक आध वस्तु न मिलनेमें क्रोध, अरुचि और दुःख अनुभवता है इसीप्रकार सम्यक्त्वी जीव नरकमें भी अपने पुराने किये हुए कर्मोंका नाश होता ही स्वयं शुद्ध होता है. शरीर पर मोह रखनेसे दुःख होता है. आत्मा अजर, अमर ज्ञान स्वरुप है ऐसा सोचकर शांति प्राप्त करता है पर मिथ्यात्वी जीव बारहवें देवलोकका महान् देवता होने पर भी मिथ्यात्व और अज्ञान के कारण अन्य देवोंकी विशेष सम्पत्ति देख इर्षा द्वेष और तृष्णाके दुःखमे दुःखी रहता है. उपरोक्त उदाहरणोंका सारांश यही है कि समकित अर्थात् सच्ची समझ यही सुखका मूल है.

ऐसा जानकर यह भावना अवश्य चिंत्वन करनी चाहिये।

अनेक पूर्वाचार्य समकितकी भावनाका आराधन करने की शिक्षा देते हुए फरमाते हैं कि, हे भव्य! तू छ महीने तक सब कामकाज कोलाहल छोड़कर शुद्ध ब्रह्मचर्यका पालन कर, शब्द, रूप, गंध, रस, स्पर्श इन पांच इन्द्रियोंके विषय क्रोध, मान, माया, लोभ ये चार कषाय और आर्त, रौद्र ध्यान (संकल्प विकल्प) का त्याग कर। एकाग्र चित्तसे समकित भावनाका चिंत्वन कर। छः महीने में तुझे अवश्य सम्यक्त्व गुण प्राप्त होगा, आत्मदर्शन अर्थात् शुद्ध निज आत्माका अनुभव प्राप्त होगा, यही सिद्धोंके सुखका भी अनुभव है।

यह सम्यक्त्व गुण प्रकट हुए पश्चात् मोक्षकी प्राप्ति स्वयं सिद्ध है, ऐसी कल्याणकारी भावनाएं शास्त्रकारों और पूर्वाचार्योंने भाव दया लाकर अनंत जन्म मरणके दुःखों से बचानेके वास्ते भव्य जीवोंके लाभार्थ फरमाई है। वे अनेक स्थानोंसे यहां संग्रह कर लिखी गई है, इनका पढ़ना, मनन करना और चिन्त्वन करना अपनाही परम हित साधनेमें अवश्य लाभ दायक है।

(१) सम्यक्त्व अर्थात् सच्ची समझ मुझे प्राप्त हो।

(२) मिथ्यात्व अर्थात् उलटी समझका नाश हो।

(३) कुदेव, कुगुरु, और कुधर्मको सच्चे मानने रूप व्यव्हार मिथ्यात्वका नाश हो।

(४) व्यवहार नयसे (१) देव, सर्वज्ञ वीतराग प्रभु (२) गुरु, तत्व के ज्ञाता, सम्यग् ज्ञान, दर्शन, चारित्र के पालनेवाले मुनिराज, (३) धर्म, विवेक सहित अहिंसा तथा विषय कषायका त्याग इन व्यवहार देवगुरु और धर्मकी मदद से निश्चय देव, गुरु, और धर्म प्राप्त करूं निश्चय तो मैं शुद्ध सिद्ध रूप हूं.ऐसा समझकर स्वानुभूतिरूपसम्यक्त्व निश्चय देव, मैं शरीरादि सकल बाह्य पदार्थोंसे भिन्नहूँ, अनंत ज्ञानादि गुण मुझ में भरे है, ऐसा ज्ञान यह निश्चय गुरु. भोगादि सर्व पदार्थ अपने नहीं, ऐसा समझकर उनका त्याग, राग द्वेष मोह रहित बन आत्मध्यानमें लीन रहना, यह निश्चय चारित्र। इन गुणोंकी मुझे प्राप्ति हो। आत्माको जानना, यह निश्चय ज्ञान; आत्माकी श्रद्धा अनुभूति; यह निश्चय दर्शन; आत्मामें रमण यह निश्चय चारित्र; इच्छा का त्याग, यह निश्चय तप, इन चारों गुणोंमें सदा निश्चलता, अक्षीणता सो निश्चय वीर्य। ये निश्चय पांच आचार मुझे प्राप्त होओ.

(५) तत्त्वकी अरुचि, यह मिथ्यात्वका चिन्ह नाश होकर मुझे तत्व पर अतिशय रुचि, यह सम्यक्त्वका चिन्ह प्रकट होओ।

(६) पर वस्तु मेरी नहीं है तो उसके नाशसे मैं क्यों भय पाऊँ? खेद देहको होता है, आत्मा अनंत वीर्यमय है सो मैं क्यों खेदित बनूं? मेरी आत्मासे भय, द्वेष खेद नाश होओ।

(७) शरीर और अन्य पदार्थोंको मैं अपने समझ हिंसा, विषय, कषाय (क्रोधादि) का सेवन करता हूं। ये दोष दूर हो ओ। ज्ञान, दर्शन, चारित्र स्वरूप, अशरीरी, अरूपी हूं ऐसे शुद्ध आत्मस्वरूपका अनुभव, यही सम्यक्त्व गुण मुझे प्रकट होओ।

(८) आत्मासे भिन्न वस्तुओंको अपनी वस्तुएँ मानना, सो मिथ्यात्व नाश होओ. अविकारी, शुद्ध ज्ञानस्वरूप आत्मा यही मेरा सत्य स्वरूप है, ऐसा दृढ श्रद्धारूप सम्यक्त्व गुण प्रकट होओ।

(९) अनादि कालसे मिथ्यात्व, मोह, भूल द्वारा भोग व इन्द्रिय सुखको अपने मानना, इस विपरीत बुद्धि अर्थात् मिथ्यात्व का नाश होओ। सर्वज्ञ वीतराग प्रभुकी स्व, पर प्रकाशक जिन वाणी सुनकर अतींद्रिय-आत्मिक सुखका अनुभवरूप समकित गुण प्रकट होवो.

(१०) विषयोंकी इच्छा, यह कर्म रोगकी खुजली है, विकार है। इसका नाश होओ। विषयेच्छा रहित आत्मिक सुख प्रकट होओ।

(११) पर वस्तुकी अभिलाषा, यह भी बड़ा भारी दुःख है। इसका नाश होओ। पर वस्तुकी इच्छाका त्याग, शांत रस, समभाव अवांच्छा रूप सत्य सुख प्रकट होओ।

(१२) कोई भी संयोग सुख दुःख नहीं देते। मै ही मोह द्वारा, राग द्वेषकी प्रवृत्तिसे स्वयं सुख दुःख उत्पन्न

करता हूँ यह मेरी ही भूल है। सत्य ज्ञान प्रकट होकर मोह मिथ्यात्वका नाश हो और सम्यक्त्व गुण प्रकट होओ।

(१३) अपनी आत्माके सिवाय सब पदार्थ दूसरे हैं। उनपर से मोह ममत्वका नाश होओ। आत्माके शुद्ध गुण प्रकट करनेकी रुचि उत्पन्न होओ।

(१४) बाह्य पदार्थ, शरीर, धन, परिवार, वैभव, निंदा, प्रशंसा सुख दु खमें आत्मलीनताका नाश होओ.

दोहा

पुद्गलमें राचे सदा, जाने यही निधान।
तस लाभे लोभी रहे, बहिरातम दुःख खान ॥१॥
बहिरातम ताको कहे, लखे न आतम स्वरूप।
मग्न रहे पर द्रव्यमें, मिथ्यावंत अनूप ॥

भावार्थः–जो आत्मस्वरूपको नहीं पहचानते और इंद्रियोंके सुखमें मग्न रहते हैं वे बहिरात्मा अर्थात् मिथ्यात्वी हैं। आत्मज्ञान, आत्मानुभव, और समभाव, ये अंतरात्माके गुण मुझमें प्रगट होवो.

दोहा

पुद्गल भाव रुचि नहिं, ताते रहत उदास।
अंतर आतम वह लहे, परमातम परकाश ॥१॥
अंतर आतम जीवसो, सम्यक् दृष्टि होय।
चौथे अरु फुनि बारवें, गुण थानक लो सोय ॥२॥

(१५) शरीर मोहसे शरीरधारी बन सदा जन्म मरण करने पड़ते हैं। इससे इस शरीर मोहका नाश होओ और परमात्मस्वरूप प्रकट होओ।

स्थिर सदा निज रूपमें, न्यारो पुद्गल खेल।
परमातम तब जाणिये, नहिं जवभवको मेल ॥१॥

भावार्थ–जो आत्मस्वरूपमें लीन हैं, पुद्गलको हमेशां भिन्न समझते हैं, जो सर्वज्ञ वीतराग हुए है और फिर संसारमे भव करने नहीं पड़ते ऐसा परमात्म स्वरूप मुझे प्रकट होओ।

(१६) मै एक हूँ, शुद्ध हूँ, बुद्ध हूँ, अरूपी हूँ, अन्य द्रव्यसे ममत्व रहित हूँ, पुद्गलसे सर्वथा भिन्न हूँ, ज्ञान दर्शनसे एक स्वरूप हूँ, परिपूर्ण हूँ, आनंद स्वरूप हूँ, इंद्रिय रहित, वांच्छा रहित, आत्मिक सुखसे भरा हुआ हू ये गुण मेरे में शीघ्र प्रकट होओ।

(१७) इंद्रिय सुखमें आनंद और दु:खमें खेद बुद्धि नष्ट होओ और संयम अर्थात् त्यागमें अरुचि रूप मिथ्यात्वका लक्षण दूर होओ।

(१८) विषयेच्छा दूर हो कर आत्मकल्याणकी इच्छा प्रकट होओ।

(१९) अनेक नय, अभिप्राय, अपेक्षा, समझनेकी समझ प्रकट होओ।

(२०) विषयके साधन शरीर, धन, स्त्री, पति, पुत्र, परिवार, मकान वस्त्र, गहने और वैभवमें ममता, वही मिथ्यात्व

दूर होओ और ज्ञानदर्शन चारित्रादि आत्माके गुणोंमें स्वामीपना सोही सम्यक्त्व गुण प्रकट होओ।

(२१) भोग, उपभोग और सांसारिक कार्योंमें लीनतारूपी मिथ्यात्वका नाश होओ और ज्ञान दर्शन चारित्र तपमें रुचि बढ़ो।

(२२) सांसारिक कार्य और आठ कर्मका कर्ता मै ही हूँ। यह मिथ्यात्व क्षय होओ, ज्ञानदर्शन और चारित्रादि निज गुणोंका ही कर्ता मै हूँ ऐसी समझ, सो समकित गुण प्रगट होओ।

(२३) इंद्रियोंके सुख दुःखका भोक्ता मै हूँ, यह विकारी दूषित ज्ञान नाश करके जिस दिन मै आत्मिक सुखका भोक्ता बनूंगा वह दिन सार्थक होगा.

(२४) मिथ्यात्वीका साध्य विषय सुख होता है जिससे शरीर, धन, भोग प्राप्त कर वह राजी होता है. समदृष्टिका साध्य आत्मिक सुख है जिससे ज्ञानदर्शन चारित्र तपकी प्राप्ति कर वह इसीमें आनंद मानता है।

दोहाः-परम ज्ञान सो आत्म है, निर्मल दर्शन आत्म।
निश्चय चारित्र आत्म है, निश्चय तप भी आत्म॥

(२५) शब्दरूप, गंध, रस, स्पर्श, पुद्गल हैं, जड़ है, अचेतन है, आत्मासे बिल्कुल भिन्न पदार्थ है। इनमें मेरापन मानना मिथ्यात्व है। इनपरसे सुख दुःख बुद्धि हटाकर

यह समझना कि अनंत ज्ञानादि गुण सम्पन्न मैही शुद्ध आत्मा हूँ ऐसी सच्ची समझरूप सम्यक्त्व गुण प्रकट होओ।

(२६) द्रव्य कर्म ( आठ कर्म जो आत्मा से लगे है ), भावकर्म ( राग द्वेष मोह ) और नोकर्म [शरीरभोगादि] पुद्गल हैं, जड़ है, अचेतन हैं, आत्मासे बिलकुल भिन्न पदार्थ है, इनमें अपना पन समझना मिथ्यात्व है। इनपर से सुखदुख बुद्धि नाश होकर सर्व कर्म रहित अनंत ज्ञानादि गुण सम्पन्न बननेकी सच्ची श्रद्धारूप समकित गुण प्रकट होओ।

(२७) कर्म व कर्मफल पुद्गल है, जड हैं, अचेतन हैं, आत्मासे भिन्न हैं। इनसे ममत्व और सुख दुख बुद्धि हर्ष, शोक, राग, द्वेष, नाश होओ और सर्व कर्म रहित मैं सिद्ध स्वरूप हू, ऐसी भावना जागृत रहो।

(२८) मैं एक हूं, शुद्ध हूँ, बुद्ध हूँ अनंतज्ञानयुक्त हूं अरूपी हूँ, अन्य सब पदार्थों से भिन्न हूँ, ज्ञान, दर्शन सुख और शक्ति से परिपूर्ण हूँ, नित्य हूँ, सत् ( उत्पन्न ध्रुव और विनाश गुण सहित ) हूँ, आनंद स्वरूप हूँ ये मेरे गुण है। ऐसी अनुभव सहित अतर श्रद्धारूप भावना जागृत रहो।

(२९) एक सम्यक्त्व गुण ऐसा प्रबल है कि जो मिथ्या ज्ञान, मिथ्या चारित्र आदि अनंत दोषों को एक साथ दूर करता है। समकित हुआ कि सम्यग्ज्ञान और सम्यग्चारित्र आदि गुण प्रगट होते है इसलिये मुझे सम्यक्त्व प्राप्त होओ.

(३०) समकितीका चिन्ह. चोपाई–

सत्य प्रतीति अवस्थाजाकी, दिन दिन रीति गहे समता की।
छिन छिनकरे सत्यको साको, समकित नाम कहावेताको ॥१॥

भावार्थः–जो आत्माका सच्चा स्वरूप निश्चय पूर्वक जाने समझे और हमेशां समताभाव बढ़ाता रहे, प्रतिक्षण आत्माका अनुभव करे उसे सम्यक्त्वी कहते है, वही सम्यक्त्व गुण मुझे प्रकट होओ।

(३१) सम्यक्त्व के व्यवहारिक पांच लक्षण है, वे प्रकट होओ. सम (समताभाव), संवेग (धर्म–धर्मी और धर्मका फल–मोक्ष से अतिशय प्रीति और भक्ति) निर्वेद, (विषय संसार से अरुचि, त्यागमें आनंद) अनुकम्पा (द्रव्य भाव दुःख दूर करनेकी सदा चिंता) आस्ता (सत्यतत्वों परश्रद्धा) निश्चय (सम्यक्त्वका लक्षण)-शुद्ध आत्माका अनुभव स्वानुभूति स्वस्वरूपका आनंद, इंद्रिय रहित–आत्मिक सुख भोगना निराकुल, अविकारी शांत रसमें स्थिरता पाना-ये गुण मुझे प्रकट होओ.

दोहा–आपा परिचय निज विषे, उपजे नहीं संदेह।
सहज प्रपंच रहित दशा, समकित लक्षण एह ॥१॥

भावार्थः–आत्माका अनुभव आत्मा में ही करे। कभी अस्थिर न होवे। स्वाभाविक प्रपंच (विषय–कषाय) रहित होवे। यही सम्यक्त्वका लक्षण है।

(३२) सम्यक्त्व के आठ गुण प्रकट होओ ।

दोहाः-करुणा, वत्सल, सुजनता, आतमनिंदा पाठ ।
समता, भक्ति, विरागता, धर्मराग गुण आठ ॥

भावार्थः-करुणा, मैत्री, गुणानुराग. आत्मनिंदा (अपने दोष के लिये पश्चाताप) समभाव, तत्त्वश्रद्धा, उदासीनता (राग, द्वेष रहित रहना) और धर्म प्रेम, ये गुण प्रकट होओ।

(३३) समकित के पांच भूषणः—

दोहाः-चित्त प्रभावना भाव युत, हेय उपादेय वाणी; ।
धीरज हर्ष प्रवीणता भूषण पंच वखाणी ॥

भावार्थः-अपने और दूसरे के ज्ञान की वृद्धि करना (२) विवेक पूर्वक सत्य, प्रिय और हितकर बोलना (३) दु खमें धैर्यरखना और सत्य न त्यागना (४) सदा संतोषी, आनंदी रहना और (५) तत्व में प्रवीण बनना; ये गुण मुझमें प्रकट होओ ।

(३४) समकित को मलीन करने वाले आठमद जाति, लाभ, कुल, रूप, तप, वल, विद्या और अधिकार मद क्षय होओ.

---

## आठ मल दोष.

चोपाई-

आशंका अथिरता वंछा, ममता दृष्टि दशा दुर्गंछा ।
वत्सल रहित दोष पर भाखे, चित्त प्रभावना मांहि न राखे ॥

[१] सत्य तत्व में संशय [२] धर्म में अस्थिरता [३] विषयकी वांच्छा [४] देह भोग आदि में ममत्व [५] प्रतिकूल प्रसंग में घृणा, अरुचि [६] गुणानुरागी न होना [७] किसी के दोष कहना और (८) अपने और दूसरे के ज्ञान की वृद्धि न करना। देव गुरु और धर्म तथा शास्त्रकी परीक्षा न करना सो मूढता है। ये सब दोष समकित गुणको मलीन करने वाले हैं, इन्हें सदा त्यागूँ।

(३५) समकित के नाश करने वाले पांच कारण सदा छोडूँगा.

दोहाः-ज्ञान, गर्व, मति मंदता, निष्ठुर वचन उद्‌गार।
रूद्र भाव आलस दशा, नाश पंच प्रकार॥

(१) ज्ञानका घमंड करना (२) तत्व जाननेमें मंद रुचि और कम प्रयत्न (३) असत्य और निर्दय वचन बोलना (४) क्रोधी परिणाम (५) उत्तमज्ञान चारित्रादिमें आलसः-ये पांच समकितके नाश करनेवाले दोषोंसे सदा बचूँ. समकितके पांच अतिचार.

दोहाः-लोक हास्य भय भोग रुचि, अग्र शोच थितिमेव।
मिथ्या आगमकी भक्ति, मृषा दर्शनी सेव॥१॥

(१) मेरी साम्यक्त्वादि प्रवृत्ति से लोग हँसेगे ऐसा भय रखना, यह शंका (२) पांच इंद्रिय के भोग की रुचि करना यह कंखा (३) सद्गुण अथवा उत्तम तत्त्वकी अरुचि यह विति

गिच्छा (४–५) मिथ्या देव गुरु धर्मकी प्रशंसा करना अथवा सेवा करना, ये पांच दोष हमेशां छोडूं.

(३६) पर वस्तुको अपनी समझ क्रोध, मान, माया (कपट), लोभ पैदा करना अनंतानुबंधी कषाय है जिससे अनंत संसार तथा अनंत दुःख मिलता है. मिथ्यात्व मोहनी ( खोटेमे आनंद ), मिश्र मोहनी (सत्य असत्य दोनों में आनंद), समकित मोहनी (सत्यमें कुछ मलीनता), ये सात प्रकृति दूर करनेसे समकित गुण प्रकट होता है। ये सातों प्रकृतिका मै नाश करूं और हमेशां सम्यक्त्व गुण धारण कर अनंत, अक्षय, सुख, पाऊं।

दोहाः–प्रकृति सातो मोहकी, कहू जिनागम जोय।
जिनका उदय निवारके, सम्यगदर्शन होय ॥१॥

## (६) मिथ्यात्व नाश करनेकी भावनाएँ.

मिथ्या अर्थात् झूंठ, असत्य। मिथ्यात्व में "त्व" भाव वाचक संज्ञाका प्रत्यय है ज्यों मनुष्यत्व ( मनुष्यपना ) त्यों मिथ्यात्व अर्थात् असत्यपना, खोटी समझ. असत्य समझ, अयथार्थ समझ ही मिथ्यात्व है। मेरा जीव स्वयं कौन है? अपने खास शुद्ध गुण क्या हैं? कर्म संयोग से मन, वचन और काया तथा इंद्रियोंकी प्राप्ति हुई हैं। मिथ्यात्वके कारण

मन, वचन, काया से भिन्न अनंत ज्ञान सुख पूर्ण आत्म स्वरूपका निश्चय और अनुभव नहीं हो सकता इसलिये मिथ्यात्व नष्ट होओ और शुद्ध आत्माका अनुभव और निश्चय प्रकट होओ. मिथ्यात्व के मुख्य पांच भेद हैं। वे अवश्य त्यागने चाहिये।

(१) अभिग्रहिक (ऐकांतिक) मिथ्यात्व एकान्त पक्ष मानेः ज्ञान और क्रिया व्यवहार (अहिंसा, संयम, तप), निश्चय (आत्मध्यान, स्वरूप लीनता) दोनों धर्म उचित स्थान पर न माने, स्याद्वाद अर्थात् अपेक्षा आशय नहीं समझे, समझ बिना स्वीकार कर लेवे, कुल परम्परा से-देखादेखी श्रद्धा करे। नवतत्वका ज्ञान, नय, और प्रमाण द्वारा कर, यथार्थ तत्व निश्चय न करना सो अभिग्रहिक मिथ्यात्व नष्ट होओ और समझ सहित, सत्य अपेक्षा सहित नय, प्रमाण द्वारा यथार्थ तत्व श्रद्धा रूप सम्यक् दर्शन गुण प्रकट होओ।

(२) अनाभिग्रहिकः-[ वैनयिक ] मिथ्यात्व-सबदेव एकसे समझे, सब गुरु, सब धर्म, और सब शास्त्र सच्चे माने, परीक्षा रहित ऐसी दशा क्षय होओ और द्वेष रहित समभाव से परीक्षा पूर्वक यथार्थ तत्व-निश्चय प्रकट होओ।

(३) अभिनिवेशिक ( विपरीत ) मिथ्यात्व-असत्यको सत्य माने, अति कदाग्रही, सत्य समझाते भी न समझे और अपने दोषको भी गुण समझे। मान, मोहके उदय से असत्य पक्ष न त्यागे, भूल मालूम होने पर भी "मैंने कहा वही सच्चा कहे पर सच्चा सो मेरा ऐसा न कहे"।

लोह वनियेकी तरह पकड़ी हुई टेक न छोड़े. मैने आजतक इस प्रकार असत्य पकड़ रक्खा, अपनी भूल नहीं स्वीकारकी इसलिये मुझे धिक्कार है. सब मिथ्यात्व में यह वडा मिथ्यात्व है जिसका मै ने सेवन किया। यह विपरीत मिथ्यात्व नाश हो और अब मेरी बुद्धि सार और सत्य ग्रहण करने में तत्पर रहो और यथार्थ तत्व श्रद्धा प्राप्त होवो।

(४) संशयिक मिथ्यात्व-सत्य में कुछ अस्थिरता और सूक्ष्म-गूढ विषय में संदेह प्राप्त होने के विचार नाश होओ नि संदेह यथार्थ तत्व श्रद्धा प्रकट होओ. ये चार मिथ्यात्त्व, संज्ञी मनवाले विशेष बुद्धिशाली जीवको ही हो सकते हैं

(५) अज्ञान मिथ्यात्व-जीव अजीवादि नव तत्वके ज्ञान रहित धर्म क्या है? आत्मा क्या है? जो यह न समझे. केवल शरीर चिंता और इंद्रिय-सुख प्राप्त करने में और दुख हटाने में ही लीन रहे. इसमें मन रहित सब जीव और मन वाले धर्म रुचि रहित सब जीवोंका समावेश होता है. यह दशा जीवकी सबसे अधिक रहती है. इसमें रहकर अनंत दुःख पाया, इस लिये मुझे धिक्कार है। अब तत्त्वका ज्ञान सीख सत्य श्रद्धावंत वननेकी भावना प्रगट होओ.

आजतक मन वचन कायासे मिथ्यात्त्व में, खोटी समझ में श्रद्धा रखी, रखाई, और रखतेको भला समझा, इसलिये मुझे धिक्कार है. और सत्यतत्त्व, निश्चय आत्मानुभव (स्वानुभूति) सम्यकत्व गुण प्रकट होओ.

## (७) सद्गुण पाने और दुर्गुण नाश करनेकी ७२ भावनाएँ.

(१) मै मेरे आत्माके सत्यस्वरूप को पहिचानूं यही मेरा परम कर्तव्य है. मै मेरे आत्म स्वरूपका सच्चा ज्ञान प्राप्त करूंगा तभी धन्य होऊंगा.

(२) शरीर, कुटुम्ब, धन तथा बाह्य पदार्थोंको मै अपने समझता हूं इसलिये मुझे धिक्कार है. शरीर कुटुम्ब, धन तथा बाह्य पदार्थोंका जिस दिन मै मोह छोडूंगा वही दिन धन्य होगा।

(३) शरीर, इंद्रिय सुख, परिवारके लिये मैं बहुत पाप करता हूं, कराता हूं, और करनेवालेको अच्छा समझता हूं, इसलिये मुझे धिक्कार है. सब पाप कर्म छोड़कर जिसदिन आत्म कल्याण करनेवाला अहिंसा, संयम और तप, धर्मका पालन करूंगा वहीदिन धन्य होगा.

(४) अनेक छोटे या बड़े जीवोंकी प्रमादवश हिंसा करता हूं, इसलिये मुझे धिक्कार है. मुझ में अहिंसा पालन करनेकी शक्ति प्रगट होओ.

(५) झूंठ बोलनेके कारण मे धिक्कारका पात्र हूं सत्य, प्रिय और हितकर बोलनेका मुझमें सामर्थ्य आवे.

(६) विना सोचे बोलता हूं, इसलिये मुझे धिक्कार है.

पूर्ण विचार किये बाद जरूरी, प्रिय और सत्य तथा थोड़ा बोलनेके गुण प्रकट होओ ।

(७) बेइमानी करता हूं, इस लिये मुझे धिक्कार है। शक्ति होते हुए दान न देना, सेवा नहीं करना, यह भी बेईमानी है, तथा त्रस, स्थावर जीवको मारना यह प्राण लूटनेकी बड़ी चोरी है । मैं इन दोषोंको छोड़ नीतिवान सदा रहूँगा.

(८) विषय सेवन किया, इसलिये मुझे धिक्कार है। शुद्ध ब्रह्मचर्य गुण प्रकट होओ ।

(९) तृष्णा करता हूं, इसलिये मुझे धिक्कार है । संतोष गुण प्रकट होओ ।

(१०) पति (स्त्री) परिवार धनादि में ममत्व रखता हूं, इसलिये मुझे धिक्कार है। संसारकी सब वस्तुओं से ममत्वका नाश हो ।

(११) क्रोध करता हूं, इसलिये मै धिक्कारका पात्र हूं. क्षमा गुण प्रकट होओ ।

(१२) मान करता हूं, इसलिये मुझे धिक्कार है । विनय गुण प्रकट होओ ।

(१३) माया कपट करता हूं, इसलिये मुझे धिक्कार है सरलता (निष्कपटता) प्राप्त होओ.

(१४) लोभ करता हूं, इसलिये धिक्कारने योग्य हूं. उदारताका गुण प्रकट होओ ।

(१५) राग करता हूं इसलिये मुझे धिक्कार है। वैराग्य गुण प्रकट होओ।

(१६) द्वेष करता हूं, इसलिये मुझे धिक्कार है। गुणानुराग सबके गुण लेनेकी बुद्धि प्रकट होओ।

(१७) कलह, कंकास किया, इसलिये मुझे धिक्कार है। समता गुण प्रकट होओ।

(१८) विकथा (फिजूलबातें)की, इसलिये मुझे धिक्कार है। धर्म कथा करनेका गुण प्रकट होओ।

(१९) पर निंदा बहुतकी, इसलिये मै धिक्कारका पात्र हूं। गुणगान (दूसरोंके गुण) करनेका गुण प्रकटो.

(२०) सांसारिक कामों में आनंद माना, इसलिये मुझे धिक्कार है. धर्म में आनंद प्राप्त हो.

(२१) परवस्तु शरीर आदिको मै अपने मानताहूँ यह मिथ्यात्व नाश होओ। ज्ञान, दर्शन, चारित्र स्वरूप मैं हूँ, अन्य सब पदार्थ मेरेसे भिन्न है. ऐसी मान्यता वही सम्यक्त्व गुण प्रकट होओ।

(२२) अज्ञान दशा में हूँ, इसलिये मुझे धिक्कार है। अनंत ज्ञान (केवलज्ञान) प्रकट होओ। ( केवल अर्थात् शुद्ध )

(२३) सम्यक्ज्ञान सीखने में मैं आलस्य करता हूं, इसलिये मुझे धिक्कार है। अपूर्व, तत्वज्ञान (आत्मज्ञान) हमेशां सीखूंगा वही दिन धन्य होगा.

(२४) निद्रा (ऊंघ) बहुत लेता हूं, इसलिये मुझे धिक्कार है। निद्रा छोड़ धर्मध्यान में ही विशेष रहूंगा वही दिन धन्य होगा.

(२५) सुख में खुश और दुखमें दिलगीर होता हूं। इसलिये मुझे धिक्कार है. समभावगुण प्रकट होओ।

(२६) मोह करता हूँ, इसलिये मुझे धिक्कार है, निर्मोही गुण प्रकट होओ।

(२७) शरीरको मैं अपना समझता हूं, इसलिये मुझे धिक्कार है. शरीर मोह नाश होओ।

(२८) यश, कीर्तिकी इच्छा करता हूँ, इसलिये मुझे धिक्कार है. स्तुति, निंदामें समभाव गुण प्रकट होओ।

(२९) उत्तम काम करनेमें मैं झूंठा भय रखता हूँ, इसलिये मुझे धिक्कार है। उत्तम काम में मुझे निर्भयता प्रगट होओ.

(३०) पापके कार्य मे मैं अभय रहता हूँ, इसलिये मुझे धिक्कार है. पापका काम करते वक्त मैं भयभीत होकर वह छोडूंगा वही दिन धन्य होगा.

(३१) पाप करने मे चतुराई करता हूं, इसलिये मुझे धिक्कार है. पाप बढ़ाने में चतुराईका नाश होओ. धर्मकार्य में तथा पाप घटाने में चतुराई प्रकट होओ।

(३२) पाप करने में पुरुषार्थ करता हूं, इसलिये मुझे धिक्कार है. पाप घटाने तथा धर्म करने में (पुरुषार्थ) उद्यम करनेकी इच्छा प्रकट होओ.

(३३) पाप–कर्म करने में बल शक्ति लगाता हूँ, इसलिये मुझे धिक्कार है। पाप घटाने तथा धर्मकार्य करने में शक्ति बल प्रकट होओ।

(३४) पाप कार्य करने में धैर्य रखता हूँ इसलिये मुझे धिक्कार है. धर्म कार्य मे धैर्य प्रकट होओ।

(३५) पाप कार्य करने में दृढता रखता हूँ, इसलिये मुझे धिक्कार है। पाप घटाने तथा धर्म कार्य में दृढ रहनेकी शक्ति प्रकट होओ।

(३६) पापकर्म करने में शूरवीरता दिखाता हूँ, इसलिये मुझे धिक्कार है. पाप घटाने और धर्मकार्य करने में शूरवीरता दिखानेका साहस प्रकट होओ।

(३७) पापकार्य करने में प्रीति रखता हूँ, इसलिये मुझे धिक्कार है. पाप घटाने तथा धर्मकार्य करने में अतिशय प्रीति प्रकट होओ।

(३८) पापकार्य करने में सफलता चाहता हूँ, इसलिये धिक्कार है। पाप घटाने तथा धर्मकार्य करने में सफलता प्राप्त होओ।

(३९) अभिमान करता हूँ, इसलिये मुझे धिक्कार है. नम्रता गुण प्रकट होओ।

(४०) बाह्य पदार्थ प्राप्त करनेमें पुरुषार्थ करता हूँ, इस लिये मुझे धिक्कार है। आत्महित के कार्यमें पुरुषार्थ करूंगा वही दिन धन्य होगा.

(४१) कठिन शब्दसे नाराज और मधुर शब्दसे राजी होता हूँ इस लिये मुझे धिक्कार है। अच्छे और बुरे वचनोंपर समभाव रखनेकी शक्ति प्राप्त होओ।

(४२) विषयकषायकी बातें सुनता हूं, इस लिये मुझे धिक्कार है। धर्मकी बातें हमेशा सुनूंगा वही दिन धन्य होगा.

(४३) नारकी तिर्यंच, मनुष्य देवादि रूप होना तथा अज्ञान, विषय–रुचि, कषायादि धारण करना मेरे आत्माकी अशुद्ध हालत (विभाव पर्याय) है इसका नाश होकर अशरीरी अरूपी, अनंत ज्ञानदर्शन सुखशक्तिकी प्राप्ति शुद्ध हालत (स्व-भाव पर्याय) सिद्ध स्वरूप प्रकट होओ

(४४) अच्छी गंध आनेसे हर्ष और दुर्गंध आनेसे शोक किया, इस लिये मुझे धिक्कार है. सुगंध दुर्गंधमें समभाव प्रकट होओ।

(४५) मोहके वश होकर रूप देखे, इस लिये मुझे धिक्कार है. दृष्टिसंयम प्रकट होओ, दृष्टिकुशीलका नाश होओ.

(४६) अच्छे. बुरे. स्वादमें हर्ष शोक किया, इस लिये मुझे धिक्कार है। सब स्वादोंमे समभाव गुण प्रकट होओ.

(४७) मै खाऊ ( खानेका लालची) हूॅ, इस लिये मुझे धिक्कार है. रसेंद्रियपर संयम रखनेकी शक्ति प्रकट होओ.

(४८) खाने पीनेमें लालच करता हूॅ, इस लिये मुझे धिक्कार है. भोजनमें संयम (अंकुश) करूंगा वही दिन धन्य होगा।

(४९) भोगकी अभिलाषा करता हूं, इस लिये मुझे धिक्कार है. सब तरहसे मेरी भोगकी इच्छा का नाश होओ।

(५०) अनीतिसे धन संचय करता हूं, इसलिये मुझे धिक्कार है. न्याय संपन्न धनमें संतोष प्राप्त होओ.

(५१) लोक भयसे कुरिवाजका पालन करता हूं, इस लिये मुझे धिक्कार है. कुरिवाज छोड़नेकी हिम्मत प्रकट होओ. प्रत्येक रीति रिवाजका रहस्य (हेतु) समझकर हितकारी आचरण करनेकी शक्ति प्रकट होओ।

(५२) कुटुम्बसे मोह रखता हूॅ इसलिये मुझे धिक्कार है। सर्व जगत्के जीव मात्रसे मित्र भावना प्रकट होओ।

(५३) असंयमका नाश होओ. संयम गुण प्रकट होओ।

(५५) कुज्ञान [अज्ञान] का नाश होओ। सुज्ञान [सम्यक् ज्ञान] प्रकट होओ।

(५६) नियाणा [इन्द्रिय सुखकी इच्छा सब नियाणा है] आज तक किया इस लिये मुझे धिक्कार है. विना इच्छासे आत्मस्वभावसे ही ज्ञानदर्शन. चारित्र और तपका पालन होओ। विषयकी इच्छा मात्र निदान है जिसका नाश होओ.

(५७) आहारकी इच्छा (संज्ञा) का नाश होओ. तपका गुण तथा अनाहार (निराहार) आत्माका शुद्ध गुण प्रकट होओ.

(५८) अनित्य, अशरण, अनंत दुःखदायक काम भोगकी इच्छाका नाश होओ. नित्य, शरणभूत अनंत सुखदायक शुद्ध ब्रह्मचर्यका हमेशा पालन होओ.

(५९) चारित्र गुणका विकार (मलीनावस्था) भोगेच्छा का नाश होओ. चारित्र गुणका अविकार [शुद्धावस्था] आत्म रमण गुण प्रकट होओ.

(६०) अतिहिंसा, अति द्वेष, विषयांधता, गुणीजनकी निंदा आदि महा * मोहनीय कर्म बधनके कारणोका मैने सेवन किया है, इस लिये मुझे धिक्कार है. दया गुणानुराग विषयत्याग और समभावके सेवनसे महा मोहनीय कर्मका नाश होओ.

(६१) ज्ञान नाशके चार कारण:-× (१) सदोष आहार

---

* जिसकी स्थिति उत्कृष्ट ७० क्रोडा क्रोड सागरोपमकी है और जो अनत जन्म, मरण दाता है। उसे महा मोहनीय कर्म कहते है।

× हिंसामय अथवा रागद्वेष युक्त.

पानी (२) कालोकाल ज्ञान ध्यानमें प्रमाद (३) पहिली तथा पिछली रात्रिमें धर्म जागरण न करना (४) विकथा अथवा ज्ञान ध्यान छोड़कर व्यर्थ बातें करना. इन चारोंमेंसे एक भी कारणका सेवन किया हो तो मुझे धिक्कार है. चार दोषोंका त्याग कर सम्यक् ज्ञानकी उत्कृष्ट आराधना होओ.

(६२) चार दुःख शैय्या (सेजा) (१) परवस्तुको अपनी मानना (२) अपने लाभसे संतुष्ट न रहकर दूसरोंके लाभ खुद प्राप्त करनेकी इच्छा करना. (३) भोगकी वांच्छा करना (४) रोग, उपसर्ग आनेसे घबरा जाना, आकुल व्याकुल होना, हिंसाके उपचार करना ये उपरोक्त चार शैय्या सेवनकी, इस लिये मुझे धिक्कार है. इनका नाश होओ. चार सुख शैया. (१) आत्म अनुभव, भेद भावना (२) संतोष (३) विषयसंयम (४) दुःखादिमें धैर्य प्रकट होओ।

(६३) जड़वाद अर्थात् शरीर चिंता, भोग वांच्छा, विलासी जीवन, धन मोहका क्षय होओ. आत्मज्ञान, भेदज्ञान, विषयत्याग, उत्कृष्ट दान और समभाव प्रकट होओ।

(६४) आज तक मिथ्यात्वसे, भूलसे भ्रमसे, शरीर इंद्रिय और विषयद्वारा कर्म बांधे हैं इस लिये मुझे धिक्कार है.

उन कर्मोंका नाश होओ। और कर्मरहित सिद्धावस्था प्रकट होओ।

(६५) राग, द्वेष, मोह मिथ्यात्व रूपी कर्तव्य कर्म चेतनाका नाश होओ समता भाव सो ही ज्ञान चेतना प्रकट होओ।

(६६) इंद्रियोंके विषयमें सुखदुःख बुद्धि सो कर्मफल चेतनाका नाश होओ. समताभाव प्रकट होओ.

(६७) परको स्वतः का समझानेवाली अज्ञान बुद्धि नाश होओ. राग द्वेष रहित, उदासीन भावकी समझ (बुद्धि) प्रकट होओ.

(६८) मनके संकल्प (इष्ट अनिष्ट बुद्धि) का नाश होओ। निर्विकल्प अवस्था प्राप्त होओ।

(६९) ध्यान, मौन समाधि प्राप्त होओ।

(७०) सकल शास्त्रका सार–आत्म–स्वरूपका ज्ञान प्रकट होओ।

(७१) प्रकृति और प्रदेश कर्मबंध का कारण मन, वचन कायाकी प्रवृत्तिका त्याग होओ तथा स्थिति और अनुभाग बंधका कारण क्रोध, मान, कपट, लोभ, राग, और द्वेषका नाश होओ।

(७२) ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तपरूपी मोक्षमार्ग की पूर्ण आराधना होओ।

पढ़ने और सुननेसे सामान्य बोध होता है। मनन करनेसे ज्ञान संशय रहित और दृढ़ होता है और वारंवार मनन करनेसे तत्व पर विचार करनेसे, उसी विषयका चिंत्वन करनेसे, अर्थात् शुद्ध भावना और ध्यान द्वारा आंतरिक आत्माके आवरणों (ढ़क्कन) का नाश होता है, मिथ्यात्वकी गांठका नाश होता है और आत्मदर्शन अर्थात् शुद्ध समकित गुण प्रकट होता है। अर्थात् वारंवार मनन करनेका फल मोक्ष है इस लिये इन भावनाओंका हमेशा नित्य नियममें चिंत्वन करना चाहिये.

## (८) श्रावकके तीन मनोरथ.

(१) आरंभ (छः कायाकी हिंसा) परिग्रह (धनादि) दुर्गति में ले जानेवाला कलहका घर, कर्म बंधका करानेवाला दुःखोंका मूल, चारों गतिमें भटकानेवाला है। जिसदिन इसे मन, वचन और कायासे त्यागूंगा वही दिन धन्य होगा।

(२) पंच महाव्रत, पांच सुमति, तीन गुप्ति, क्षमा आदि दस प्रकारके यति धर्मको स्वीकार करूंगा, समस्त कुटुम्ब, परिवार, धन, सम्पत्ति, त्याग शुद्ध संयम धारण करूंगा वही दिन धन्य होगा.

(३) मैं अंत (मृत्यु) समय मन, वचन और कायासे किये हुए कराये हुए और भले समझे हुए पापोंका पश्चात्ताप करूंगा और प्रायश्चित लूंगा चार आहार और अठारह पाप स्थानकके प्रत्याख्यान कर राग-द्वेष रहित बन समभावसे विचरूंगा और सोचूंगा कि शरीर और सब पदार्थों से मै भिन्न हूं, अजर हूं, अमर हूं, अविनाशी हूं, अनत ज्ञान तथा आत्मिक सुख पूर्ण शुद्ध आत्मा हूं, सिद्ध स्वरूप हूं, ऐसा अंतरआत्मानुभव करते करते पंडित मरण प्राप्त करूंगा वही दिन धन्य होगा.

## (९) सदाचारी बननेकी बारह भावना.

(१) अनित्य भावनाः-शरीर, धन, भोग-सामग्री, स्त्री (पति), पुत्र, माता-पिता परिवार, वैभव, निंदा-स्तुति, घोडे, हाथी, वस्त्र आदि सब वस्तुओंको मै मेरी समझ रहा हूं और उनसे ममत्वकर, राग द्वेष लाकर अनादि कालसे चारों गतिमें भटक रहा हूं। ये पंचेंद्रिय के भोग अनित्य-नाशवान् और क्षणभंगुर है। उन्हें भोगने से अनंत कालतक नर्क, तिर्यंच गतिके भयंकर दु.ख भोगने पडते है और नित्य आत्मिक सुख प्राप्त नहीं होता; ऐसा विचार कर इन भोगों को त्याग कर नित्य,अक्षय,अनंत,सुखदाई,ज्ञान, दर्शन,अहिंसा सत्य, ब्रह्मचर्य, संयम. तपमय धर्मको ग्रहण करनाही लाभ-दायी है, जिससे कि मुझे नित्य अनंत सुखकी प्राप्ति होगी. अनित्य भावना लाने से श्री भरत चक्रवर्तीजीको केवल ज्ञान प्रकट हुआ मुझे भी केवल ज्ञान प्रगट होओ.

दोहाः-राजा, राना छत्रपति, हथियन के असवार।
मरना सबको एकदिन, अपनी अपनीवार ॥१॥

२ अशरण भावनाः-अज्ञान और मोहके वशीभूत हो यह आत्मा दुःखसे बचने के लिये धन, स्त्री, (पति), कुटुम्ब, हाट, हवेली इत्यादि बाह्य साधनों और सामग्रियोंको अपनी रक्षाका हेतु समझता है परन्तु सत्य और उसके स्वरूपका यथार्थ विचार करनेसे मालूम होता है कि ये भोग के साधन ही

जीवको अनंत दुःखदायक, अशरणदाता और नर्क तिर्यचके घोर दुःख देनेवाले है और निरंतर शरणभूत अनंत आत्मिक सुखका कारणभूत धर्म में विघ्नकर्ता है; ऐसा खास विचार कर इन सब काम-भोगके साधनोंको छोड़ अहिंसा, ब्रह्मचर्य, सत्य, संयम, तप, आत्मज्ञान, आत्मध्यान ग्रहण करना खास जरूरी है, यह भावना अनाथि मुनिके दिलमें आई और उन्होंने मोक्ष-पद प्राप्त किया, इसी प्रकार मुझे भी अशरण भावना प्राप्त होओ।

दोहाः—धन बल देवी देवता, मात पिता परिवार।
मरती वेला जीवको, कोई न राखन हार॥

इस प्रकार शरीर, धन, भोग, परिवार, निंदा, स्तुति इत्यादि सब साधन जीवको अशरणदाता है और मै अनादि कालसे इन्हे शरणदाता समझता था. मैने इन्हें ज्यों ज्यों शरणदाता समझा त्यों त्यों मुझे अनंत दुःख उठाना पडा. इन वस्तुओसे मैंने दुःख दूर करनेकी कोशिशकी, पर दुःख दूर न हो सका और जब सत्य स्वरूपका विचार किया तो मालूम हुवा कि ये सब साधन एवं सामग्री जीवको तीनो काल में भी दु.ख से नहीं बचा सक्तीं, परंतु अनंत दुःख बढाने-वाली है। इसलिये अहिंसा, सत्य, ब्रह्मचर्य, संयम, तप, जो अनंत सुखदायक है उन्हें ग्रहण करना चाहिये।

(३) संसार भावनाः—अनादि कालसे मै जन्म, जरा, मृत्युरूपी संसारमें परिभ्रमण कर रहा हूं। इसका मूल कारण

संसारके पदार्थ, शरीर, पांच इंद्रियके भोग, अज्ञान, मोह, और रागद्वेष है। जब मै इन सबको छोडूंगा तब ही संसार के परिभ्रमणसे मुक्त होऊंगा. और अनंत अव्यावाध, आत्मिक ( इंद्रिय रहित ) सुख–पूर्ण मोक्ष प्राप्त कर सकूंगा। मेरी आत्माने इस संसारमें परिभ्रमण करते हुए सब प्रकारके भोजन ( मेवा मिष्टान्नादि ) खाये तथा सब स्थान, राज्य महल, देवलोक आदि, सब सुखके संयोग, पांच इन्द्रियोंके सुख जिन्हें मै अज्ञानतासे सुख मानते आया हूं और उनके बदले अनंत दुःखके सागर नर्क, तिर्यंच आदिमें अनंत वक्त दुःख देखे परंतु यह जीव संतुष्ट नहीं हुवा। जिस प्रकार अग्नि, लकडीसे कभी शांत नहीं होती परंतु विशेष बढती है उसी प्रकार यह जीव ससारके विषय भोगोंसे कभी भी शांत नही हुआ और उसने अनंत दुःख ज्यादा पाया। जिस प्रकार अग्निको शांत करनेका उपाय पानी है उसी प्रकार इस जीवको संसारसे मुक्त करनेका उपाय अहिंसा, सत्य, ब्रह्मचर्य, संयम, क्षमा, निर्लोभता, ज्ञान, दर्शन, चारित्र, ध्यानादि है। इस पानीसे जीवकी विषयरूपी अग्नि हमेशाके लिये शांत हो जाती है। और अनंत सुख ( मोक्ष ) की प्राप्ति होती है. ऐसा विचार कर इस सब संसारसे सम्बध त्यागना श्रेयस्कर है। श्री धन्ना सालीभद्रजीने संसार भावनाका चिन्तवन कर आत्मकल्याण किया वैसा मुझे भी प्राप्त होओ।

दोहाः-धन विना निर्धन दुखी, तृष्णावंत धनवान ।
कोउन सुखी संसारमें, सब जग देखा छान ॥
होय न तृप्ति भोगसे, यह अनादिकी रीत।
जो सयम गुण प्रकट करे, रहे सकल दुःख जीत ॥२
परद्र० । में प्रीति है, यही संसार अवोध ।
याको फल गति चारमे, भ्रमण कह्यो सूत्र शोध ॥३

भावार्थ-परवस्तुमे प्रीति रखनेही से संसार ( जन्म-मरण और मिथ्यात्व वढता है जिसके कारण चारों गतिमें परिभ्रमण करना पड़ता है: श्री आचार्य महाराजने सब सूत्रों का यह सार है, ऐसा फरमाया है ।

(४) एक-त्व भावना.

दोहाः-आप अकेला अवतरे, मरे अकेला होय ।
कवहू अपने जीवको, साथी सगो न कोई ॥१॥

यह भावना लाते हुए ऐसा सोचे कि मै एक हूँ, शुद्ध हूँ, वुद्ध हूँ, अनंत ज्ञानमय हूँ, अरूपी हूँ, अन्य द्र०योंसे निर्ममत्वी हूँ, सर्वथा भिन्न हूँ, ज्ञानदर्शन सहित हूँ, प्रतिपूर्ण हूँ, एक स्वरूप हूँ, नित्य हूँ सत् स्वरूप हूँ, आनंद स्वरूप हूँ, इंद्रिय रहित हूँ, निराकुल ( इच्छारहित ) हूँ, अनंत आत्मिक सुखसे भरपूर हूँ, मै अकेला जन्मा हूँ और जव मेरी मृत्यु होगी तव भी अकेला ही जानेवाला हूँ । इस जगत में कोई वस्तु मेरी नहीं। अज्ञान और मिथ्यात्वसे जीवको कर्म अनादि कालसे लगे हैं, इस लिये शरीर प्राप्त कर अनंत कालसे सुख

दुःख भुगत रहा हूँ। जब अज्ञान और मिथ्यात्वका सर्वथा नाश करूंगा तब कर्म रहित अशरीरी, शुद्ध बुद्ध परमात्मा-स्वरूप हो जाऊंगा. ऐसी एकत्व भावना श्री नमी राज ऋषि-जीने चिंतवन की और अपना आत्म-कल्याण किया, वैसी मुझे भी चिंतवन करना चाहिये.

(५) अन्यत्व भावना अर्थात् भेद भावना.

दोहाः-जहां देह अपनी नहीं, तहां न अपना कोय।
घर सम्पत पर प्रकट है, पर है पर जन लोय ॥१॥

भावार्थः-जब शरीर भी अपना नहीं उसे भी त्यागकर चला जाना पड़ता है तब दूसरा अपना कौन है? घर सम्पत्ति, और परिवारभी अपनेसे भिन्न हैं, यह साफ प्रकट है तो भी अज्ञानसे मैं आज तक इन्हें अपने समझ दुःख उठाते आया हूँ. अब भेद-भावना लाकर सब दुःख रहित बनूंगा।

दोहाः-भेद ज्ञान सो मुगति है, जुगति करो किम कोय।
वस्तु भेद जाणे नहीं, मुगति कहांसे होय ॥१॥

इस प्रकार विचार करे कि यह शरीर और जितने बाह्य पदार्थ दृष्टिगत होते है वे सब जड़ और चैतन्य द्रव्य मेरी आत्मासे भिन्न (पृथक) है, मैं इनसे भिन्न हूँ। मेरी आत्मा अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत आत्मिक सुख, अनंत, वीर्य, ये चार गुणवाली है। मै अज्ञान और मोहसे अन्य वस्तुको अपनी समझ राग द्वेष कर अनंत कालसे दुःख पा-रहा हूं. मुझे तीनों कालमें (वर्तमान, भूत भविष्यमें) अपनी

आत्मा और इसके शुद्ध गुणोंके सिवाय अन्य कोई वस्तु सुख नहीं दे सकती. पुत्र, स्त्री (पति), माता, पिता आदि चैतन्य तथा धन-धान्य, वैभव आदि जड़ पदार्थ जो दृष्टिगत होते है वे सब पदार्थ त्यागना ही मेरे लिये लाभदायक है। जिस दिन मै इन सब पदार्थोंको त्यागूगा वही दिन मेरा परम कल्याणकारी होगा. श्री मृगापुत्रजीने यही भेदभावना भाई और आत्म-कल्याण किया वैसी मुझे भी प्राप्त होओ।

दोहाः—भेद ज्ञान साबू करी, समरस निर्मल नीर।
धोबी अंतर आतमा, धोवे निज गुण चीर ॥३॥

(६) अशुची भावनाः—इस प्रकार विचार करे कि यह मेरा शरीर हाड, मांस, रुधिर, मल, मूत्र श्लेष्म, खूंखार, मेद, पित्त कफ, वायु, कीड़े तथा नसाजाल आदि से भरपूर भरा हुवा है। इस शरीर में कोईभी वस्तु रमणीक, सुगंधी-वाली मनोहर दृष्टि-गत नहीं होती। और यह शरीर केसर, कस्तुरी, चंदन, कुंकुं आदि सुंदर पदार्थोंको भी बिगाड़ देता है अर्थात् मलमूत्ररूप बना देता है, इतना होते भो इस शरीरको सुख और स्नेहका भाजन मानना बड़ीही अज्ञानता है; ऐसा समझ इस शरीर पर मोह नहिं करूगा। इस शरीरकी उत्तमता केवल धर्म पालन से ही बताई गई है, इसलिये ज्ञान, दर्शन, चारित्रकी आराधना करने में समय मात्रका भी प्रमाद करना ठीक नहीं है. कारण किः—

दीपे चाम चादर मढी, हाड पिंजरा देह।
भीतर या सम जगत में, और नहीं घिन गेह ॥

भावार्थः–हाड के पिंजरेवाली यह काया चमडी रूपी चादर से मढी होनेसे शोभा पाती है परंतु इसके अंदर जो वस्तुएँ भरी है उनपर विचार करते यह ज्ञात होता है कि इस शरीर जैसा दूसरा दुर्गंधीवाली स्थान संसार में और कोई नहीं है, कारण पखाने–में गिरा हुवा पदार्थ तो थोड़ीसी गंधके हेर फेर से पीछा स्वच्छ हो जाताहै पर इस शरीर मे पड़े हुए बादाम, घी, शक्कर, कस्तूरी आदि पदार्थ तो मल बनकर ही पीछे निकलते है।

दोहाः–शरीर विष्टा कोथली, तेमां शुं मोहाय।
ममता तजी समता धरे, ते जीव सुगति पाय ॥

ऐसा विचार कर ज्ञानी पुरुष ऐसे मलीन अपने तथा अन्यके शरीर पर मोह नहीं करते कारण कि इसपर मोह करना जीवको महा दुःखदाई है. ऐसे दुर्गंधी रूपवाले शरीर पर मोहकर जीव एक वक्तके काम भोग में असंख्य जीवोंकी घात करडालता है. और फिर आप अनंत दुःख पाता है। इसलिये मुझे इसपर मोह नहीं करना चाहिये। यह अशुचि भावना सनत्–कुमार चक्रवर्तीने चिन्तवनकी और शरीर परसे ममता हटा आत्म–कल्याण किया. इस प्रकार मुझे भी इस क्षणभंगुर, दुर्गंधीवाले शरीर परसे खोटी ममता, स्नेह, विषय,

राग हटाकर दान, शील, तप, भाव, ज्ञान, दर्शन, चारित्र गुण धारणकर इसे सफल करना चाहिये।

७ आश्रव भावनाः—यह जीव आश्रव और उसके सम्बन्धी कारणों से चार गतिके अंदर परिभ्रमण कर रहा है; मन, वचन, काया ये तीन योग और क्रोध, मान, माया लोभ ये चार कषाय द्वारा कर्मोंका आश्रव होता है इसलिये मुझे मन, वचन, और कायाको ध्यान में स्थिर रखना हितकर है। और कषायको सब तरह त्यागनाही लाभकारी है।

दोहाः—संज्ञा, लेश्या, आदित्रय, इंद्रिय वशता होय।
आर्त, रुद्र, कुध्यानता, मोह, पाप, पद सोय ॥१॥

भावार्थः—चार संज्ञा, तीन प्रथमकी लेश्या (कृष्ण, नील कापोत) पांच इंद्रियोंके वश होजाना, आर्त, रुद्र ध्यान ध्याना और राग, द्वेष, मोह ये आश्रव के कारण हैं।

दोहाः—कर्म ग्रहण करे जोग करी, जोग वचन मन काय।
भाव, हेतु, स्थिति बंध है, रागादि उपजाय ॥

मन, वचन, कायासे प्रकृति और प्रदेश बंध होते है और रागद्वेषसे स्थिति तथा रसबंध होते हैं.

मन, वचन, और काया रूपी योगसे कर्म दल रूपी द्रव्याश्रव होता है और क्रोधादि कषाय यह भावाश्रव है। शुभ योगसे शुभाश्रव और अशुभ योगसे अशुभाश्रव होता है, इसलिये मुझे द्रव्याश्रव और भावाश्रव दोनों त्यागना श्रेयस्कर है. ये मेरे अनंत आत्मिक सुखके घातक है।

दोहाः—राग, द्वेष अरु अज्ञता, भाव आश्रव भवी जाण।
अष्ट कर्म दल आगमन, द्रव्य आश्रव प्रमाण ॥ १॥

यह भावना समुद्रपाल मुनिने ध्याई और आत्मकल्याण किया, उसी प्रकार मै भी आश्रवको त्याग संवरको धारण कर आत्मकल्याण करूंगा वह दिन धन्य होगा।

८ संवर भावनाः—यह जीव संवर धारण करनेसे चतुर्गतिके क्लेश दुःखसे छूटता है और अनंत सुख प्राप्त करता है. यह संवर मन, वचन और काया के योगको रोकनेसे प्राप्त होता है। मनको धर्म ध्यानमें लगाना, वचनसे सत्य, मधुर, प्रिय सबको हितकारी और निर्वद्य ( पापरहित ) भाषा बोलना, कायाको अहिंसामय धर्ममें लगाना और चार कषायको रोकना; यह संवर है।

दोहाः—निज स्वरूप में लीनता, निश्चय संवर जाण।
सुमति गुप्ति संयम धर्म, करे पापकी हाण ॥

भावार्थ.—पांच सुमति, तीन गुप्ति, और दस प्रकारके क्षमादि यति धर्म; ये सब संवरको प्रकट करनेवाले है. आत्म स्वरूपमें लीनता, रमणता, यह निश्चयसंवर है. जिस दिन मै योग प्रवृत्ति तथा कषायका त्याग कर आत्म-स्वरूप में लीन हो संवर भावना आराधूंगा वह दिन धन्य होगा. यह भावना केशी महाराज और गौतम स्वामीने चिन्तवन की और आत्मकल्याण किया। उसी मुजब मुझे भी द्रव्य और भाव संवर प्राप्त होओ।

९ निर्जरा भावनाः— दोहाः—

संवर योग विमल सहित, विविध तपो विधि धार ।
बहुत कर्म निर्जर करण, सो मुनि त्रिभुवन सार ॥

१ अनशनः—आहार त्याग, थोड़े समयके लिये या जीवन पर्यंत.

२ उणोदरी—खाने पीने तथा काममे आनेवाली वस्तुएं घटाना यह द्रव्य उणोदरी और विषय कषाय घटाना, यह भाव उणोदरी.

३ वृतिसंक्षेप—इच्छाएं रोकना, अभिग्रह करना.

४ रस परित्यागः—दूध, मिठाई, मसाला, शाक, मसालेवाले आचार आदि पौष्टिक या स्वादिष्ट पदार्थ त्यागना ।

५ कायक्लेशः—सब काम हाथसे करना, सेवा करना, पांव २ चलना, आतापना लेना, आसन करना आदिः—

६ प्रतिसंलीनताः—इंद्रिय-संयम, पांचो इन्द्रियों पर कब्जा रखना.

७ प्रायश्चितः—पापकी शुद्धि, पश्चात्ताप और प्रकट में माफी मांगना तथा उचित दंड आत्मशुद्धिके लिये हर्षपूर्वक स्वीकार करना.

८ विनयः—जिसके पांच भेद हैं—

(१) अपूर्वज्ञान हमेशा सीखना, यह ज्ञानविनय

(२) व्यवहार, निश्चय, नयसे प्रत्येक विषयको समझ उसपर श्रद्धा लाना तथा आत्माका अनुभव करना, यह दर्शन (समकित) विनय।

(३) हिंसा, विषय, कपायका त्याग करके मन, वचन और कायाको रोकना, यह चारित्र-विनय.

(४) इच्छाएं रोकना यह तप विनय।

(५) गुरु, वड़ेरे, गुणी पुरुप आदिकी विनय, भक्ति करना यह लोकोपचार-विनय (व्यवहार-विनय)

९ वैयावच्चः-सेवा, भक्ति करना और ज्ञान, दर्शन, चारित्र में स्थिर करना.

१० सज्झायः-उपयोग सहित पढ़ना (वांचन), पूछना, याद करना (परियट्टणा) और विशेप उपयोग लगाना (अणुपेहा) तथा धर्मोपदेश देना (धर्म-कथा) स्व कहेतो आत्मा और ध्याय अर्थात् चिंतन जो आत्मचिन्तनमें सहायक है सो सज्झाय है.

११ ध्यानः-एकाग्र चित्तसे उत्तम विषयका चिन्तन करना।

१२ काउसग्गः—वचन और कायाकी प्रवृत्तिको त्यागना, मनको धर्म ध्यानमें लीन करना.

प्रथम कहे हुए छः तप बाह्य—तप है। वे प्रत्यक्ष दृष्टि-गत होते है और दूसरे छः तप अभ्यंतर तप है। बाह्य—तप अभ्यंतर तपको प्रकट करने तथा दृढ़ करनेमें लाभदायक है।

इस प्रकार बारह तप संवर भावपूर्वक आराधन करें तो बहुत से कर्मोंकी निर्जरा होती है। मुझे संवर के साथ बारह प्रकारके तप करनेकी इच्छा प्राप्त होओ।

यह भावना अर्जुनमाली मुनिने भाई और आत्म-कल्याण किया तथा थोड़े ही समय में बहुत से कर्मों के समूहको क्षय कर मोक्ष प्राप्त किया।

दोहाः—पंच महाव्रत पालके, सुमति पंच प्रकार।
पांचों इंद्रि विजय कर, धार निर्जरा सार॥

१० लोक भावनाः—मैंने सब लोक में, सब जगह सब अवस्था में सब सुख और दुःखकी दशा अनंत समय भोगी है. कोई स्थान ऐसा बाकी नहीं रहा कि जहां मैंने अनतवार जन्म मरण न किये हों. सब पदार्थ अनंतवार भक्षण किये। परंतु जीवको तृप्ति, संतोष नहीं हुवा. इसलिये अब इस लोकके सब पदार्थों परसे ममत्व हटा अनंत—ज्ञानादि गुण धारणकर जब हिंसा विषय, कषायका त्याग करूंगा तब

अनंत सुख, पूर्व मोक्ष प्राप्त हो सकेगी यह भावना शिवराज ऋषीश्वरने भाई और मोक्ष प्राप्त किया, उसी प्रकार मुझे भी लोकभावना प्रकट होओ ।

दोहाः—लोक स्वरूप विचार के, अपना स्वरूप निहार ।
परमारथ व्यवहार मुनि, मिथ्या भाव विदार ॥१॥

भावार्थः—हे आत्मा ! लोक स्वरूप पर ध्यान लगा अपना शुद्ध स्वरूप देख । इस लोकमें छः द्रव्य है उनमें तू चैतन्य अनंत ज्ञानादि गुणयुक्त है । वर्ण, गंध, रस, स्पर्श आदि पुद्‌गल ( जड़पदार्थ ) तुझसे भिन्न हैं, प्रथक हैं और उनसे तू भिन्न ( अलग ) है । निश्चय और व्यवहार चारित्र पाल कर तुझे यह अपना मिथ्या स्वरूप त्याग देना परम कल्याणकारी है ।

दोहाः—चौदह राजु उत्तंग नभ, लोक पुरुष संठाण ।
तामे जीव अनादि से, भ्रमत है विन ज्ञान ॥

११ बोधभावनाः—बोध अर्थात् आत्म स्वरूपका ज्ञान करना हो सारभूत है । मैने आजतक आत्म–ज्ञान प्राप्त न किया यही जन्म मरण का कारण हुवा । इसलिये मुझे आत्माका शुद्ध स्वरूप समझ मेरे निज गुण अनंत ज्ञान, दर्शन चारित्र, वीर्य प्रकट करना श्रेयस्कर है ।

दोहाः—बोधी अपना भाव है, निश्चय दुर्लभ नाहि ।
भव मे प्राप्ति कठिन है, यह व्यवहार कहाहि ॥

भावार्थः—बोधि तीनरत्न ज्ञान, दर्शन, चारित्र आत्मा के गुण हैं. ये प्राप्त करना सरल हैं, कारण अपनी वस्तु होनेसे निश्चय में कुछ कठिन नहीं । जो ऐसी दुर्लभता दिखाई गई है वह व्यवहार से कही गई है । मोक्ष मार्ग (रत्नत्रय) भोगकी विषय इच्छावालेको मिलना कठिन है और जिसने विषयेच्छा दूर की है उसे बिलकुल सरल है ।

१२ धर्म भावनाः—ऐसा विचार करे कि यह जीव अनादि कालसे सम्यग् ज्ञान, दर्शन, चारित्र विना चतुर्गति के अंदर परिभ्रमण कर रहा है. आत्मा अधर्मसे दुःखी होता है और धर्म धारण करनेसे चतुर्गतिके सब संकटों से छूट कर मोक्ष प्राप्त करता है । हिंसा, विषय, कषाय, अज्ञान, मिथ्यात्व ये सब अधर्म हैं, दुःखके कारणभूत है. इसलिये जिस दिन मै इन्हे त्यागूंगा अहिंसा, इंद्रिय विजय, अकषाय संयम, सम्यक्त्व गुण आत्मधर्म तथा आत्म स्वरूप में विचरूंगा और नित्य, सत्य, प्रतिपूर्ण, अक्षय, अव्याबाध, अविनाशी, अविचल मोक्षके सुखको प्राप्त करूंगा वह दिन परम कल्याणकारी होगा.

धर्म वस्तुके स्वभावको कहते है. मैने अनंत ज्ञानादि चारों धर्मोंको मलीन बनाकर उनके बदलेमें अल्पज्ञान, अल्पदर्शन, विषयसुख बालवीर्यरूप अधर्म धारण किया है इसलिये चतुर्गतिमें अनंतकालसे दुःख उठा रहा हूं, जब मै

शुद्ध गुणरूपी धर्म प्राप्त करूंगा तब मुझे अव्याबाध, निराकुल अनंत आत्मिक सुखकी प्राप्ति होगी.

दोहाः—जाचे सुरतरु देत सुख, चिंते चिंता रत्न ।
विन जाचे विन चिंतवे, धर्म सकल सुख यत्न ॥१॥

## (१०) चौदह नियम.

( मेरुके समान पापको विवेकसे राईके समान बनानेके सरल उपाय )

इच्छा, तृष्णा रोकना, संयम है । ऐसा करनेसे आत्माके कर्म बंध घटते हैं और काट कसरवाला सुखी सादा जीवन बनता है तथा प्रत्यक्ष में बहुत सुख मिलता है । आवश्यकताएँ घटाना, थोडेमें काम चलाना, मितव्ययी जीवन है और यही किंचित् संयमी जीवन है । जबतक धन-रक्षाकी एक भावना लगी है तबतक बाह्य लाभ होता है पर जब विषय त्यागकी समझ पैदा होती है तब भाव-त्याग कहलाता है और उसका फल अपूर्व है । चौदह नियम द्रव्य और भाव सुख देनेवाले है । वे हमेशा धारण करना चाहिये.

(१) सचित-कच्चा नमक पानी, पक्के बीज सहित फल, कच्ची हरी लीलोतीआदि खाने में संयम रखे और मर्यादा करे । जमीकंद न खावे इसमें अनंत सूक्ष्म जीव होतें है.

(२) द्रव्य–जितने पदार्थ खाये जायँ, उनपर संयम रक्खे। मर्यादा करे।

(३) विगय ( विकार उत्पन्न होता है जिससे विकृति–विगय ) दूध, दही, घी, तेल, मिठाई ( शक्कर, गुड़ और ऐसी वस्तुऑ ) की मर्यादा करे। मद, मांस, शहत और मक्खन महाविगय है। वे नहीं खावे.

(४) पग रक्षाके साधन–मोजे, जोड़े, चंपल आदिकी मर्यादा

(५) ताम्बुल–पान, सुपारी, इलायची आदिकी मर्यादा

(६) वस्त्र पहिननेकी मर्यादा.

(७) सूंघनेकी वस्तुओंकी मर्यादा.

(८) वाहन–गाड़ी, घोडा, ट्राम, रेल्वे आदिकी मर्यादा.

(९) आसन, बैठने सोनेके.

(१०) विलेपन–शरीरके लगानेके तेल, अंजन, चंदन, कुंकुं आदिकी मर्यादा.

(११) ब्रह्मचर्य–मर्यादा.

(१२) भोजन और पानीकी मर्यादा, प्रमाण और जात.

(१३) दिशा–कितनी २ दूर जाना.

(१४) स्नान–मर्यादा।

(१) कच्ची मिट्टी (२) पानी (३) अग्नि–चूल्हा सख्या, ईंधन वजन (४) वायु–पंखे आदि (५) वनस्पतिकी मर्यादा

भाव में आत्म हिंसाका त्याग करे जैसे हिंसा असत्य, अप्रमाणिकता, विषय भोग, निंदा, क्रोध, गर्व, कपट, तृष्णा, क्लेश इन सबका त्याग करना। ये भाव-शस्त्र है. इनसे अपनी तथा दूसरोंकी भाव हिंसाका घोर पाप तथा दुःख होता है.

इस प्रकार जो रोज त्याग करेंगे, आवश्यकताएं और आत्माके दोष घटावेगें, वे सब पापोंसे सरलतासे छूट अनंत सुख प्राप्त करेंगे।

## (११) मुनिकी भावनाएँ.

(१) हमने संसार त्यागा तबसे खाने, पीने, कपड़े, मकान, मान, पूजा, निद्रा, गप्पे में कितना संयम किया है, वह सोचूंगा और हमेशा संयमकी वृद्धि करूंगा, संयम इसलोक तथा परलोक दोनों मे परमहितकारी है. संयमीको हिंसा, झूठ, अप्रमाणिकता, मैथुन, धन संचय, इर्षा, द्वेष, क्रोध, गर्व कपट, लोभ नहीं करना पड़ता जिससे इस शरीरसे वे रोग, शोक, चिन्ता, भय, तृष्णा, शत्रुता, निंदा, आदि, सकल दुःखोंसे छूट कर परमानंद भोगते है और परलोक में तो अनंत सुख पाते है. असंयमी मनुष्य यहां रोग, शोक, चिंता, भय, तृष्णा, शत्रुता,से दुःखी होते है और परलोकमें भी अनंत दुःख पाते है. यह बात यथार्थ है, शास्त्रकारोंने भी यही फरमाया है.

गाथाः—अप्पा चेव दमेयव्वो, अप्पा हु खलु दुद्दमो।
अप्पा दंतो सुही होइ, अस्सिलोए परत्थय ॥१॥

आत्मा दमन करने योग्य है, आत्म दमन करना अति दुष्कर है. कारण इस जीवको अनादिसे विषयका दुष्ट व्यसन हो गया है परंतु जो आत्म-दमन करते है विषय कषाय (भोग-क्रोधादि) छोडते है वे इस लोक और परलोकमें सुखी होते है। यदि यहां स्वतंत्रासे संयम नहीं करेंगें उन्हें परवशपने मार और बंधन भोगने पडेंगें.

(२) संसार और मोक्षके मार्ग एक दूसरेसे बिलकुल प्रतिकूल है जिससे संसारी सब प्रपंच और प्रवृत्तिका त्याग करने के लिये सावधान रहूंगा। संसारी धन, वैभव, भोग, मान, पूजा, इंद्रिय सुख में आनंद मानते हैं जब कि मोक्षार्थी उसे दुःखरूप मानता है.

(३) शरीर मोहका क्षय कर तपस्वी बनूंगा तब धन्य होऊंगा.

(४) खान पान और मान सम्मानकी इच्छा न रक्खूंगा।

(५) तीन मनोरथ अर्थात् भावना (पवित्र दृढ इच्छा) हमेशा अनेक वार चिंतारूंगा और ये गुण प्रकट करूंगा।

(१) अपूर्व तत्व-ज्ञान हमेशा सीखूंगा।

(२) आठ गुणोंको धार एकांत आत्मभाव में विचरूंगा वही दिन धन्य होओ।

(१) यथार्थ तत्व निश्चय (श्रद्धावंत) (२) पूर्ण सत्य अज्ञान, मिथ्यात्व और कषाय रहित मन, वचन और काया (३) बुद्धिवंत (हिताहितका निर्णय कर सच्चे मार्ग पर लेजानेवाली विवेकबुद्धि पैदा हो। (४) बहुसूत्री यथार्थ नय, प्रमाणपूर्वक शास्त्रका ज्ञाता (५) शक्तिवंत -प्रत्येक अच्छा कार्य करनेमें समर्थ (६) उपशांत कषाय हों (७) धैर्यवंत दुःखसे कभी न घबरावे (८) वीर्यवंतः—सदा पुरुषार्थी, ये गुण मुझे प्रकट होओ।

(३) आजतक अठारह पाप और आठ कर्मबंधके कारणोंका सेवन किया उनका हमेशा पश्चात्ताप कर माया (क्रोध, मान, कपट, लोभ), नियाण (इंद्रिय सुखकी इच्छा), मिथ्यात्व (विपरीत समझ), ये तीन शल्य सर्वथा दूर कर आराधिक पद पंडित—मरण प्राप्त करूंगा वही दिन धन्य होगा, रोज सभी पापोंका प्रायश्चित (आलोचना) करूंगा तभी आराधिक पद प्राप्त होगा।

(६) शिष्य लोभ, संम्प्रदाय मोह, पूजा प्रशंसाकी इच्छा क्षेत्र, शरीर, वस्त्र, पात्रादिका ममत्व मिथ्या रूढियोंमें पक्षपात कदाग्रह, कलह आदि सब दोष दृढ़तासे त्यागूंगा तभी सुखी होऊंगा।

(७) गुणानुराग, इंद्रियदमन, तत्वोंका पठन पाठन, मौन, ध्यान, समाधि आदि गुण प्राप्त होओ।

(८) शुद्ध पंच महाव्रत, पांच सुमति, तीन गुप्ति, दस क्षमादि धर्म, बारह प्रकारका तप, २७ साधुके गुण आंतरिक उपयोग सहित सदा आत्म-जागृति भावसाधु और निश्चय साधुके गुण प्रगट होओ.

(९) दिनके चार भाग करूंगा। छ घंटे तक नया ज्ञान सीखूंगा, पढूंगा, तीन घंटे तक सीखा हुआ ज्ञान रातको याद करूंगा, चिंत्वन करूंगा, तीन घंटे ध्यान, उत्तम भावनाएँ और तत्त्वोंकी पहिचान एवम् पढ़े हुए ज्ञानके रहस्य पर विचार करनेमें लगाऊंगा, छः घंटे आहार निहार प्रतिलेहन आदिमें विताऊंगा और छः घटे निद्रा लूंगा. साधु जीवनको सफल बनानेके लिये मैं इस प्रकार नियमित रीतिसे व्यवहार करूंगा. प्रभुकी आज्ञा मुताबिक बारह घंटे स्वाध्याय, छः घंटे ध्यान, तीन घंटे आहार निहार और तीन घंटे तक निंद्रा लूंगा वही दिन धन्य होगा.

## (१२) पात्रापात्रका स्वरूप और सुपात्र होनेकी भावानाएँ.

पूर्व कथित भावनाओंके सब गुण सुपात्रमें मिलतें है इसलिये सुपात्र बननेका उद्योग करना आवश्यक है। पात्रके पद्रह भेद हैं जिनमें ३ भेद मुख्य है. (१) सुपात्र (२) अल्पपात्र (३) और अपात्र.

यहां सत्य सुख आत्मिक सुख अर्थात मोक्षके पात्र कौन है; इस अपेक्षासे पात्रका विचार किया गया है.

(१) सुपात्रः—जो व्यवहारिक और निश्चयात्मक दोनो गुण धारण करता है वह सुपात्र है. व्यवहारके भी दो भेद है.

(१) द्रव्य और भाव, द्रव्यमें हिंसा असत्य, अप्रमाणिकता, अन्याय, अनीति, विकारी जीवन और कोई भी व्यसनादि दोष न हों और बाह्य साधन, अच्छा पठन पाठन, सद्गुणीकी सेवा, सत्संग आदि गुण जिनमें हो वह द्रव्य शुद्धि है। अंतरात्मा में अज्ञान, विपरीत मान्यता ( मिथ्यात्त्व ) क्रोध, गर्व, कपट, तृष्णा, विषयेच्छा, राग, द्वेष, हर्ष. शोक, चिंता, भय. कायरता न हो वह भाव शुद्धि है, द्रव्य और भाव शुद्ध हो तो व्यवहार में शुद्ध समझा जाता है ।

निश्चयशुद्धः निश्चय अर्थात् सत्य स्वरूप जीव अजीवादि नव तत्वको नय और प्रमाण से यथार्थ समझना, सत्य, श्रद्धा,

निश्चय कर तत्वार्थ के ज्ञाता बनता और शुद्ध आत्म स्वरूप का अनुभव करना यह निश्चय शुद्ध. जहां निश्चय शुद्ध है वहां व्यवहार शुद्ध अवश्य रहता है परंतु जहां व्यवहार शुद्ध होता है वहां निश्चय शुद्ध होता है और नहींभी होता है। इस प्रकार सुपात्र बनने वालेको व्यवहार और निश्चय दोनो शुद्ध रखना चाहिये और वही मोक्ष ( सत्य सुख ) के योग्य है । ये सब गुण मुझ में प्रकट होओ ।

(२) अल्पपात्रः—जो व्यवहार शुद्ध है पर निश्चय शुद्धि (तत्वार्थ निश्चय और शुद्ध आत्मानुभव) नहीं है वह पुण्य संचय करता है. वह देव तथा मनुष्य के वैभव प्राप्त कर सकता है पर—मोक्ष—अक्षय सुख नहीं पा सक्ता । यहां जिस आत्माको सत्य पानेकी जिज्ञासा होती है, सत्य पाकर सुपात्र बन सकता है । मैं भी इन गुणों द्वारा सुपात्र बनुं.

(३) अपात्रः—जिसमे ब्राह्य और आंतरिक गुण रूप व्यवहार शुद्धि और शुद्ध आत्मानुभवरूप निश्चय शुद्धि न हो वह अपात्र है. ये दोष दूर होकर मुझे सुपात्र के गुण प्राप्त होओ।

उत्तम सुपात्र (साधु) के तीनभेद—मध्यम सुपात्र (श्रावक) के तीनभेद. लघु सुपात्र (समदृष्टि) के तीनभेद यों नौ प्रकार के सुपात्र है. तीन अल्प पात्र और तीन अपात्र इस प्रकार पात्र के कुल पंद्रह भेद कहे गए है ।

(१) श्रेष्ठ उत्तम सुपात्रः सर्वज्ञ वीतराग प्रभु.

(२) मध्यम उत्तम सुपात्रः–अप्रमादी मुनि.

(३) लघु उत्तम सुपात्रः–व्यवहार निश्चय ज्ञान, दर्शन, चारित्र तपके धारक मुनिवर।

(४) श्रेष्ठ मध्यम सुपात्र –साधु समान त्रिकरण, त्रियोग, से सर्व पाप के त्यागी श्रमण भूत, ग्यारहवीं प्रतिमाधारी शुद्ध आत्मानुभव करनेवाले सुश्रावक.

(५) मध्य मध्यम सुपात्रः–नव वाड़ सहित विशुद्ध प्रतिपूर्ण ब्रह्मचर्य नामको सातवीं प्रतिमा से सपाप (सावद्य) प्रवृत्ति के त्याग नामकी दसवीं प्रतिमा के धारी सु श्रावक.

(६) लघु मध्यम सुपात्रः–उदासीन वैराग्यवंत, शुद्ध बारह व्रतधारी, शुद्ध आत्मानुभव करनेवाले सु श्रावक तथा पहिली प्रतिमासे छठी प्रतिमा तकके श्रावक.

(७) उत्तम लघु सुपात्रः–क्षायक सम्यक्त्वी.

(८) मध्यम लघु सुपात्रः–उपशम सम्यक्त्वी.

(९) जघन्य लघु सुपात्रः- क्षयोपशम सम्यक्त्वी.

तीनों लघु सुपात्रः–मिथ्यात्त्व उत्पन्न करनेवाली सातो प्रकृतिका अभाव करनेसे होते हैं उनमें शुद्ध आत्मानुभव सहित व्यवहार सम्यक्त्वके सकल गुण होते है.

मिथ्यात्त्वकी सात प्रकृति—

पर वस्तु को अपनी समझ क्रोध, गर्व, कपट, लोभ (रागद्वेष) करना, अनंत दुःखका कारण, अनंत संसार बढाने

वाला, अनंतानुवधी कषाय है. अतत्व श्रद्धा, असत्यमें आनंद, मिथ्यात्व मोहनी है, कुछ सत्य कुछ असत्य दोनो मै आनंद, मिश्र मोहनी है, सत्य में किंचित् मलीनता शंकादि समकित मोहनी है। इन सातों मिथ्यात्व प्रकृतिका क्षय होओ।

(१०) उत्तम अल्प पात्र–व्यवहार (द्रव्य–भाव) चरित्र शुद्ध है परंतु आत्मानुभव नहि हुआ ऐसे मुनि.

(११) मध्यम अल्पपात्रः–आत्मानुभव विना जिनका द्रव्य-भाव शुद्ध है वे श्रावक.

(१२) जघन्य अल्प पात्रः–जिनमें व्यवहार सम्यक्त्व के गुण है पर जिन्हें आत्मानुभव नहीं.

(१३) मुख्य अपात्रः–जिन्हे शुद्ध आत्मानुभव नहीं हुआ और जो व्यवहार उत्तम चारित्रवान नहीं ऐसे साधु.

(१४) मध्यम अपात्रः–जिन्है शुद्ध आत्मानुभव भी नहीं और जो विवेक पूर्वक उत्तम व्रत पच्चखाण भी नहीं पालते ऐसे नामधारी श्रावक.

(१५) जघन्य अपात्रः–जिन्हें शुद्ध आत्मानुभव भी नहीं और जिसमें समभाव, धर्म–भक्ति, वैराग्य, अनुकम्पा श्रद्धा आदि गुण भी नहीं है ऐसे सम्यक्त्वी नामधारी जैन और सब मिथ्यात्वी.

भावना–मुझमें अपात्र के दोष भरे हैं उनका क्षय होओ और सुपात्रके गुण प्रकट होओ.

## (१३) असंख्य समूर्छिम पंचेंद्रिय मनुष्यकी रक्षा, अपनी रक्षा और आरोग्य लाभ.

शरीरसे निकलते हुए पदार्थोंमें अंतर मुहुर्तमें असंख्य मनरहित (असंज्ञी) पंचेंद्रिय मनुष्य प्रतिक्षण उत्पन्न होते हैं. जिनकी काया अंगुल के असंख्यातवें भागको और आयुष्य अंतर मुहूर्तका रहता है। यदि मल मूत्रादि शरीरके अशुभ पदार्थ खुली जगहमें जल्दी सूख जाय वहां दूर डाले जायँ तो जीवकी हिंसा तथा दूसरों आरोग्यमें हानि पहुंचानेके पापसे बच जायँ और स्वयं भी निरोग बने रहें। उन समुर्छिम मनुष्योंके उत्पन्न होनेके १४ स्थान हैं (१) दस्त (२) पेशाब (३) खंखार कफ (४) नाकका सेड़ा (५) उलटी—कै (६) पित्त (७) रस्सी (८) खून (९) वीर्य (१०) वीर्यादि पदार्थ सूख कर फिर गीले हों (११) जीव रहित मृत शरीर (१२) स्त्री पुरुषके संयोग (१३) [illegible], खाळी. मोरी. (१४) सब ऐसे गंदकी के स्थानोंमे [illegible] [illegible] एक बर्तनमें पेशाब कर सुबह डालते हैं। [illegible] [illegible] चाहिये। पेशाब पर पेशाब नहीं करना [illegible] [illegible] नहीं जाना, झूठा जहां तहां नहीं डालना, [illegible] [illegible] आदि नियम बनती कोशिशसे पालना चाहिये. [illegible]के साधारण नियमोंका ज्ञान न होनेके [illegible]से हिन्दमें रोग और पाप बढते जाते हैं

खराब हवासे विकार बढ़ते हैं और इससे दुर्बल शरीर हो जाता है तथा विषय-लालसा बढ़ जाती है। जिसके फलमै अनीति, वीर्य हानि तथा रोग होकर मनुष्य भव, पुण्य और धर्मका नाश हो जाता है इसलिये गंदकी घटा सब तरह सुखी होना.

ब्रह्मचारी मुनि खुल्ली हवामें और तापमें जंगल ( टट्टी, पायखाना) जाते है, खुल्ले पांव चलते है, गटरवाले संडासको काममें लेते नहि है और स्नान वगेरेकी प्रवृत्ति करते नहि है तो भी निरोगी रहेते है. जत्ना-विवेक वहांहि धर्म है.

## (१४) विद्यार्थी भावना.

प्रत्येक विद्यार्थीके लिये सदा प्रातःकालमें प्रभुस्तुति करनेके बाद अवश्य चिन्तवन करने योग्य, ये भावनाएँ है। मनुष्य जबतक सर्वज्ञ न हो तबतक विद्यार्थी ही रहता है, इसलिए प्रत्येक मनुष्यको इन भावनाओंका निरंतर ध्यान करना चाहिये।

(१) हे परमात्मा! मै आपको भावपूर्वक नमस्कार करता हूँ। आपके समान मेरी आत्मामें भी अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन, आत्मिक सुख और अनंत आत्मिक शक्ति-ये चार मुख्य गुण भरे है परन्तु अज्ञान आदि ग्यारह दोषोंके सेवन करनेसे मेरे ये गुण मलीन होगए। अब मुझे यह उत्तम मनुष्य-जन्म मिला हुआ है। मै इन सब दोषोंको छोड़कर आपके तुल्य बननेका पुरुषार्थ करूंगा।

(२) दोषोंको नाश करनेके उपायः—१ सत्य ज्ञानसे अज्ञानका नाश करूंगा, २-सद् विवेक (सम दृष्टि) से अंधता (मिथ्यात्व) का नाश करूंगा, ३-अहिंसासे हिंसाको छोड़ूँगा, ४-सत्यसे असत्यको छोड़ूँगा, ५-ईमानदारीसे चोरी छोड़ूँगा, ६-ब्रह्मचर्यसे विषयवासनाका नाश करूँगा, ७-क्षमासे क्रोधको शान्त करूँगा, ८-विनयसे गर्व छोड़ूंगा, ९-सरलतासे कपट छोड़ूंगा, १० संतोषसे

तृष्णाका नाश करूँगा, ११ सत्पुरुषार्थ से तृष्णाका नाश करूँगा। इस प्रकार इन ग्यारह गुणोंद्वारा ग्यारह दोषोंका नाश करके हे प्रभो! मै आपके तुल्य बनूँगा।

(३) यह शरीर मिट्टीका है। यह मिट्टी भारत देशकी है। मै भारत देश और भारत वासियोंके हितके लिए अपने शरीर बुद्धि, शक्ति, धन, सत्ता तथा सारे वैभव अर्पण करूँगा परन्तु सभी अवस्थामे अहिंसा, सत्य, सद्‌विवेक आदि ग्यारह गुणोंहीका पालन करके विजय पाना सदा लक्ष्यमें रखूँगा। शरीर, धन, सत्ता, वैभव आदि निश्चय ही नाशवान् है, इसलिए इनके द्वारा सत्कर्म करना ही उचित है। वैसा करना मेरा अपना ही आत्मकल्याणका काम है। अतः सत्कार्योंके करनेको मैं परोपकार अर्थात् दूसरों पर उपकार नहीं मानूँगा परन्तु आत्मोपकार ( निजका उपकार ) मानूँगा।

(४) द्रव्य (धन) पैदा करनेके लिए अथवा वाह्य लाभ हीके लिए मै नहीं पढ़ता हूँ परन्तु शरीर, मन और आत्माकी उन्नति कर स्व-पर ( अपना और औरों )का कल्याण करनेमें समर्थ बननेके लिए मै पढ़ता हूँ।

(५) सभी बुरी आदतें, दुर्व्यसन-चाय, कोफी, तमाकू, बीड़ी, गांजा, भंग आदि नशेकी चीजें, मसालेदार खुराक, नाटक, सिनेमा, वेश्यानृत्य, कुरुचि पैदा करने वाले उपन्यास, नावेल आदि शत्रुओंसे मै सदा बचूँगा।

सदाचारी, संयमी और उत्तम चारित्रवान् वनूंगा तथा जीवन सुधारकी ही उत्तम पुस्तकें सदा प्रेमसे पढूंगा ।

(६) मै विद्यार्थी हूं। मुझे पढ़ना है अर्थात् मुझे सीखकर शिक्षा पाना है। शिक्षा किसे कहते हैं? जिससे बुद्धिका विकास हो, जो कैसा भी अवसर क्यों न हो, सद्बुद्धि उत्पन्न कर सच्चा मार्ग दिखावे, जो हित और अहित दोनोंको पहिचानना सिखावे और उनमें में से अहित तजकर हित ही ग्रहण करनेकी बुद्धि पैदा करे और जो निर्दोष आनन्द और सच्चा सुख प्राप्त करावे उसीका नाम शिक्षा है।

शिक्षा तीन प्रकारकी है:-१. शारीरिक, २. मानसिक ३ आत्मिक.

(१) मै शारीरिक शिक्षा लूंगा-अर्थात् उपर्युक्त व्यायाम आदि और नियमित ढंगसे शरीरको कसूंगा, और अपना प्रत्येक काम स्वतः मन लगाकर करना सीखूंगा, शारीरिक कष्टको बल बढ़ानेका साधन मान, हर्षपूर्वक श्रम (मिहनत) का काम करूंगा।

(२) मै मानसिक शिक्षा लूंगाः-अर्थात् प्रत्येक वातमें मुझे कौनसी हितकारक है और कौनसी अहितकर, यह जानना सीखूंगा तथा मानसिक शिक्षाके लिए मै अच्छी पुस्तकें, पत्र पत्रिकाओं आदिका वांचन मनन करूंगा और सत्सगत करूंगा। स्कूलों और कालिजोंकी शिक्षा मानसिक शिक्षा प्राप्त करनेका साधन है। केवल डिग्रियों पा लेना और अपना

जातिबंधुओंका, सब समाज और देशका हित न सोचना अक्षर पाण्डित्य है–शिक्षा नहीं। शिक्षा वहीं है जो सदाचारी और परोपकारी बनावे। स्वार्थी बनानेवाली शिक्षा कुशिक्षा है। मै ये बातें खास ध्यानमें रखूंगा।

३. मैं आत्मिक शिक्षा लूगा,—अर्थात् आत्माको अजर, अमर और ज्ञानादि अनंत गुणोंका भण्डार मानूंगा और अहिंसा, सत्य, प्रमाणिकता, ब्रह्मचर्य, संतोष, क्षमा, दया, विनय, सेवाभाव और संयम आदि गुण प्राप्त करनेका निरंतर प्रयत्न करूॅगा।

ऐसी शिक्षाएँ प्राप्त करूॅगा तभी शिक्षित कहलाने योग्य बनूॅगा और ये ही शिक्षाएॅ मुझे सच्चा सुख देंगी।

(७) इस प्रकार शिक्षा प्राप्त कर मै बचपनसे ही निर्भय, सादा, पुरुषार्थी, धर्मश्रद्धावंत, दयालु, सेवाभावी, सत्यवादी, ब्रह्मचारी, संतोषी, उदार और विषय संयमी बनूॅगा।

(८) माता, पिता, गुरु, वृद्ध जन आदि प्रयेक पुरुषको आदरकी दृष्टिसे देखूॅगा और उनकी सुशिक्षानुसार व्यवहार करूॅगा। कभी सामने नहीं बोलूॅगा। मै सच्चा होऊॅगा तो पहिले उनको शांत करके फिर सत्य निवेदन करूॅगा।

(९) उपरोक्त रीतिसे शरीर, बुद्धि और आत्माका विकास कर मनुष्य जन्मको देवोंसे भी पूजनीय बनानेका मै हमेशा प्रयत्न करूगा।

(१०) इन सबकी नीव शुद्ध ब्रह्मचर्य है। इसलिये इसका पालन करनेके निमित्त मैं स्वादपर संयम रक्खूंगा, मेरी दृष्टि शुद्ध, नीची रक्खूँगा। आंखोंको वशमें रखूंगा और विकार बढाने वाले संयोगोंसे बचूंगा।

(११) हस्त मैथुन, सृष्टि विरुद्ध कर्म (पुरुषका पुरुषके साथ मैथुन) और बाललग्न; ये तीनो शरीर, बुद्धि, बल, आयुष्य, पुण्य, सुख और धर्मके नाशक, रोग, शोक पैदा कर जीतेजी नर्कमें डालनेवाले है, इस लिए इनसे मैं हमेशा बचूंगा। मैं यह प्रतिज्ञा लेता हूँ।

(१२) बुरी संगति, एक साथ सोना, एकांतमें खेलना, छिपा-लुकीका खेलना, घोड़ा घोडी बनने आदि खेलोंसे कई बालकोंकी बुरी आदत होजाती है। जैसे आँख, नाक आदिमे खुजली चलनेपर उसे खुजालनेके लिए इन अंगोको काच या पत्थरसे खुजालनेवाला दुःखी होता है उसी प्रकार पिशावके स्थानमें भी यदि खुजली चले तो उसे रोग समझना चाहिये। इसे विषय कहते है। जो इस खुजलीको सुविचार तथा संयमद्वारा मिटा देते हैं वे बहुत सुखी रहते है। और बुरे काम करनेवाले भयंकर दुःख उठाते है। जैसे अण्डेको हिलानेसे उसके अन्दरका जीव बाहिर निकले विना ही मर जाता है, उसी प्रकार बालक अवस्थामे कुकर्म करनेसे वीर्य स्पष्टरूपसे निकलता

मालूम नहीं देता परन्तु पिशाबद्वारा वीर्य क्षय होना प्रारम्भ हो जाता है। इसे धातुक्षय कहते है। बुरी आदतोंसे वीर्य क्षय होनेके कारण बुद्धि, बल, सुख, आयुष्य, पुण्य और धर्मसे हाथ धोना पडता है। ऐसा जानकर इस दोषके जीवन पर्यंत त्यागूंगा। ऐसी दृढ प्रतिज्ञा लेना बहुत आवश्यक है. आज अनेक बालकरुपि रत्न बुरी आदतेरुपि अग्निमें खाक (राख) हो रहे हैं। उनको ज्ञान प्राप्त होकर अपनी (निजकी) रक्षाकी सुबुद्धि सदा प्रकट रहो, यही मेरी भावना है।

(१३) ब्रह्मचारो–विद्यार्थी जीवन ही जीवनका सुखमय समय है. यह जीवन जितना पवित्र और लम्बा होगा उतनाही सुख और मोक्ष समीप रहेगी, इस लिये मै ब्रह्मचारी जीवन ज्यादा लम्बा विताउंगा.

(१४) पुरुषके २५ वर्ष और स्त्रीके १६ वर्ष पहेले वीर्यादि मुख्य धातुएँ कच्ची होती है इसलिये इस आयुके प्रथम हुए लग्न अत्यंत हानिकारक है। इस आयके प्रथम लग्न हो तो अनेक रोग आघेरते हैं और मंद बुद्धि प्राप्त होती है, वृद्धावस्था जल्दी आती है और उम्र भा थोडी मिलती है। इसके परिणाम स्वरूप संतान भी ऐसी ही होती है जिससे दूना दुःख उठाना पडता है। एक अपना और दूसरा संतानका। और वंशपरंपरा देश, जाति, तथा समाजको दुःखी बनानेका

लगता है, इस लिये इन सब दोषोंसे बचनेका हमेशां प्रयत्न करना चाहिये। ब्रह्मचर्य पालने मैं जो कष्ट (श्रम) है उससे करोडो गुनो कष्ट (दुःख) ब्रह्मचर्य नहीं पालनेवालेको इसी ही जन्म मैं तत्काल भोगने पड़ते है. जहाजमैं पड़ा हुआ छेद बंध करनेतुल्य कष्ट ब्रह्मचर्य मै है। जहाज, खुद और धनके नाशके दुःख तुल्य विषयभोग है।

(१५) पुरुषको धातु २५ वर्षमें पकती है। और स्त्रीकी १६ वर्षमे; इन धातुओंका शरीरमें पूर्ण होनेका समय पुरुषके लिये ४० वर्ष और स्त्रीके लिये २५ वर्षका है। जो व्यक्ति इतने काल तक शुद्ध ब्रह्मचर्य पालता है वह 'मनुष्य पूर्ण सुखी" बनता है। और उसको संतान भी महान् वीर, धीर, विद्वान, मनुष्यरत्न, उत्पन्न होती है, इस लिये इस उम्र तक मै ब्रह्मचारी बना रहूं; ऐसी मुझमें शक्ति प्रकट होओ।

(१६) अखंड ब्रह्मचर्य अर्थात् जीवनपर्यंत ब्रह्मचर्यका पालन करनेको शक्ति शरीरधारी आत्माको भी परमात्म स्वरूप बना देती है इस लिये जब मै सब इंद्रियोंका निरुंधन कर इच्छाओंको रोकूंगा, आत्म ध्यानमें स्थिर रहूंगा और प्रतिपूर्ण ब्रह्मचर्य पालकर परमात्म पद प्राप्त करूंगा वही दिन धन्य होगा.

(१७) विनयसे विद्या प्राप्त होती है और विद्याकी सफलता सच्चारित्रसे होती है। विनयके तीन प्रकार है।

(१) मनसे–विद्या, विद्यागुरु और विद्वानों की और पूज्यभाव और बहुमान रखूंगा।

(२) वचनसे–विद्या, विद्यागुरु और विद्वानोंका गुण गाउंगा, स्तुति करूंगा।

(३) कायासे–विद्यागुरु और विद्वानोंको नमस्कार करूंगा और हमेशा उनको सेवा भक्ति करूंगा.

विषको जानकर भी जो खाता है वह मरता है. इसी प्रकार विद्या पढ़कर भी दोष त्यागके जो सदाचारी नहीं बनते वे दुःखी होते है, इस लिये मै विद्या शीख सद्चारित्र-वान बनूंगा।

(१८) विकार दूर करनेवाला ज्ञान ही विद्या है. यह शरीर, मन, और आत्माके मलको, दोषोंको और विकारको ढूंढ निर्दोष तथा निरोगी बनाता है। खूब भूख लगे तब खूब चबा कर किया हुआ सादा आहार, ब्रह्मचर्य और उपवासके शरीरके विकार (रोग)को दूर करते है। अच्छी भावनाएँ अच्छा पाठ मनन और सत्संग तथा विषयवासना पर संयम; ये मनके दोषका दूर करते हैं और तत्वज्ञान आत्मस्वरूपका ज्ञान ये आत्माको दोषोंसे बचनेका मार्ग दिखाते है और सच्चारित्र आत्माको शुद्ध करते हैं। ऐसी सद्विद्या मै प्राप्त करूंगा।

(१९) वृक्षकी आरोग्यतासे फलकी आरोग्यता रहती है। इसी प्रकार देशकी उन्नति में मेरी उन्नति रही हुई है। मैं मेरा जीवन देश सेवामें बीताऊंगा और जेसी स्थिति अमेरीका देशकी स्वामी सत्यदेवजीने अपने अपने साढ़े पांच वर्षके गाढ़ अनुभवसे भजनमें प्रकट की है वैसी उत्तम विषयोंमे उन्नति मैं भारत देशकी करूंगा। प्रत्येक देश, जाति और मनुष्य मै गुण दोष दोनों होते है। मैतो मधु मुक्खीके समान उत्तम गुण ही सब स्थानोंसे हमेशा ग्रहण करूगा–

हर एक मर्द औरत, जिसको था मैने देखा, ।
वह देश हित नशेंमे, फूलानथा समाता ॥१॥
चाहे जान तनसे जावे, परदेश पै फिदा है; ।
छोटे वडो में सब में, हुब्दे वतन था पाता ॥२॥
उनकी है एक भाषा, और एक राष्ट्र उनका; ।
अच्छे साहित्य द्वारा, उसका है यश वढ़ाता ॥३॥
खतरे मे जब मुल्क हो, और कोई आवे दुश्मन; ।
कया मर्द हो कया औरत, झण्डे के नीचे आता ॥४॥
आपसमें चाहे कितने, मझहबी फसाइ होवें, ॥
पर देश हितके सन्मुख, सब कुछ है भूलजाता ॥५॥
तालीम तो यहां पर, सबको मुक्त है मिलती;
कैसा ही हो अभागा, वह भी इल्मको पाता. ॥६॥

उनहे यहां की चीजे, हर एक मुल्क जातीः ।
खिँच खिँचके धन जहांसे, उनके यहां है आता ॥७॥
न ऊंच नीच जाने, न छुतछात माने; ।
सबके हक्क बराबर, सबकी है एकमाता. ॥८॥
भारतको गर उठाना, चाहते हो दिलसे अबतुमः ।
तो एक भाषा करदो. तज ऊंच नीच नाता. ॥९॥

(२०) इस भारतदेशमें हंमेशां करीब चार करोड़ मनुष्य भूखे रहते है । ऐसी हालत में ऐशआराम, मौज, शौख, विलासी पदार्थ, फैशनका सर्वथा त्याग करूंगा सादी खादी पहिन कम खर्च में जीवन बिताऊंगा तथा सर्व बचत देश हितमें लगाऊंगा.

(२१) विद्याका सार "सदाचार" है. सदाचार अहिसा, सत्य, और पुरुषार्थ है । मैं इन तीन गुणोंको धारण कर मनुष्य जीवनको सफल करूंगा.

## (१५) ब्रह्मचर्य प्राप्ति और उसकी रक्षाकी भावनाएँ.
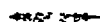
( त्यागी और भोगी प्रत्येक को इन भावनाएँका अवश्य चिन्तन करना चाहिये )

(१) सुखका मूल शुद्ध ब्रह्मचर्यका सदा पालन होओ ।

(२) दु:खदाई विषयेच्छाका नाश होओ ।

(३) क्षणमात्र मिथ्या सुख वतानेवाले और वहुतकाल तक दुःख देनेवाले विषय प्रसंगका त्याग होओ ।

(४) अनंत अक्षय सत्य सुख देने वाले शुद्ध ब्रह्मचर्यका प्रतिपालन होसके ऐसे संयोग रहे ।

(५) चारित्र गुणका नाश करनेवाली विषयेच्छा नष्ट होओ ।

(६) चारित्र गुणको शुद्ध पालन करानेवाला ब्रह्मचर्य प्रकट होओ । विकारी सुख क्षय होकर अविकारी सुख प्रकट होओ ।

(७) मोक्ष मार्ग में विघ्न करनेवाली भोगेच्छा नष्ट होओ।

(८) मोक्षको शीघ्र प्राप्त करानेवाला शुद्ध ब्रह्मचर्य पूर्णतासे पालन होओ। सकल दुःखोंका नाश ब्रह्मचर्य से ही होगा ।

(९) सर्व अनर्थोंकी खान भोगेच्छाका नाश होओ । सर्व सिद्धिका कारण अखंड ब्रह्मचर्य प्राप्त होओ ।

(१०) नव वाड सहित शुद्ध ब्रह्मचर्यका पालन होओ । स्त्री-पुरुष सवधी भोगका त्याग सो स्थूल-ब्रह्मचर्य, पांच इंद्रियोके विषयका त्याग सो व्यवहार ब्रह्मचर्य, और शुद्ध आत्म स्वरूप मै रमणता सो निश्चय ब्रह्मचर्य मुझे प्राप्त होओ.

(११) सब रोगोंकी मूल (जड़) आयुष्यका शीघ्र अंत करनेवाले और रोगी, भाररूप संतानको उत्पन्न करनेवाले विषयानंदका नाश होओ।

(१२) हाड़, मांस, खून, मल मूत्र, कफ, कीड़े, आदि से पूर्ण अशुचिमय और दुर्गंधी देनेवाले शरीर परसे मोह हठो और विषय वासनाका नाश होओ और हमेशा विषय पर (कब्जा) संयम रहो।

(१३) जहां मोह रहता है वहां जन्म होता है, इस न्यायसे शरीर में कीडे बनकर जन्म होने के कारण रूप भोग–विषयकी इच्छाका नाश होओ। और परम सुखदाई ब्रह्मचर्यका पालन होओ। विषयकी इच्छा मात्र से दुर्गति मिलती है तो उसका सेवन करना कितना दुखदाई होगा? ऐसा समझ हमेशां विषयका त्याग करूंगा।

(१४) एक समय भोग करनेमे असंख्य कीडे, असंख्य पंचेंद्रिय असंज्ञी (संमुर्छिम) मनुष्य और अनेक संज्ञी मनुष्यकी हिंसा होती है जिससे भोगके फलमें अनंत जन्म मरण करने पडते हैं ऐसी भोगेच्छा नष्ट होओ और अभोगी ब्रह्मचर्य पालनेका गुण प्रकट होओ। दूसरोंकी रक्षा करना निश्चय हीं अपनी ही रक्षा है।

(१५) आत्माको भूलाकर पर वस्तुमें लीन करनेवाली विषयेच्छाका नाश होओ। ब्रह्म अर्थात् आत्मा, चर्य अर्थात्

रमण करना. आत्म लीनतारूपि ब्रह्मचर्य प्रकट होओ। आत्माके चारित्र (रमणकरना) गुणकी मलीनता ही विषयेच्छा है सो नाश होओ और चारित्र गुण ( सुख )की निर्मलता सोही ब्रह्मचर्य-स्वरूप रमणता प्रकट होओ।

## (१६) ब्रह्मचर्यका नव वाड़की भावनाएं।

ब्रह्मचर्यकी रक्षाके लिये नव वाड (मर्यादा) की अत्यंत आवश्यकता है। उनका मैं बराबर पालन करूंगा. वाड (मर्यादा) का पालन ही ब्रह्मचर्यका पालन है।

(१) स्त्री (पुरुष) पशु, नपुसक रहित तथा विकार रहित मकान में रहूंगा जैसे बिल्लीवाले स्थान मे चूहों को रहना जोखिमकी बात है वेसे ही उपरोक्त स्थान मे रहेने से ब्रह्मचारीको जोखिम है.

(२) स्त्री (पुरुष) की तथा विषयोत्पादक कथा-वार्तालाप नही करूंगा, नही सुनुंगा और न ऐसी बातें ही पढूंगा। चतुर भाटके वचनोंसे वीर पुरुषको वीररस चढजाता है उसी प्रकार विकारकी इच्छा जागृत हो जाती है। इसलिये नाटक या सिनेमा देखना या नॉवेल पढना त्यागूंगा.

(३) जहां स्त्री बैठी हो वहां पुरुषको दो घडी तक न बैठना चाहिये और जहां पुरुष बैठा हो उसी स्थान पर स्त्रीको

वारह मुहूर्त तक नहीं बैठना चाहिये ( इतना नहीं वन सके तो उस स्थान पर अपना आसन बिछाकर उसपर बैठना चाहिये क्योंकि वीर्य में १२ मुहुर्त (साडा नव घंटा छ मीनीट तक गर्भ धारण करनेकी सामर्थ्य है). समीप और एक आसनपर भी नहीं बैठना चाहिये, जैसे घीका घडा और अग्निका दृष्टांत.

(४) स्त्री (पुरुष) का रूप, वस्त्र, अलंकार (गहने) अंगो पांग नहीं देखूंगा, दृष्टि सदा नीची और विकार रहित रक्खूंगा, सूर्य के सन्मुख कच्ची आंख वालेके देखनेसे आंखे चली जाती है उसी प्रकार रूप देखने से ब्रह्मचर्य गुण मलीन हो जाता है और दृष्टि–कुशीलका पाप लगता है। प्रथम दृष्टि से ही प्रायः विषयेच्छा जागृत होती है. एक सीढी पर से लुटकने वाला सौ सीढी भी गिरजाता है. वैसे ही आंख पर अंकुश नहीं रखनेवाला प्रथम पहिचान करता है फिर वातें करता है, परिचय बढाता है और अनेक वार ब्रह्मचर्य से चूक जाता है. इसलिये प्रथम से ही वचते रहना अत्यंत आवश्यक है। ब्रह्मचारीको वाजार, मेले, नाटक, सिनेमा, नाच, लग्न आदि विकार वढानेवाले दृश्य नहीं देखने चाहिये।

(५) स्त्री पुरुपके विपय भरे हुए शब्द नहीं सुनुंगा. दम्पति सोते हो और जहां उनके शब्द सुन पडते हो वहां

नहीं रहूंगा। क्योंकि मेघ गर्जारव और मयूरका दृष्टांत इसपर लगता है।

(६) पूर्व भोगे हुए भोगोको कभी याद नही करूंगा. जैसे पुराना बैर और प्रिय जन का वियोग याद आता है तब क्या दशा होती है ?

(७) विकारवर्द्धक पदार्थ, (घी, दूध, आदि पौष्टिक वस्तुएं विशेष और तेल, मिर्ची, मसाला, खटाई आदि) नहीं खाऊंगा. जैसे सन्निपातवाले को दुध शक्कर मार डालती है उसी प्रकार ये वस्तुएं विषय जागृत करती है। यह भाव विष है। विषयका अर्थ विकृति जो विकार करे, बिगाड करे, स्वरूपको भूलावे सो विषय

(८) ज्यादा भोजन और पानी आलस्य, रोग और विकार पैदा करता है। सेर भरकी हंडीमें सवा सेर खिचडीका दृष्टांत। या तो हंडी फूट जाय या खिचडी ढुल जाय। ज्यादा भोजन से अजीर्ण हो रोग हो या विकार जागते है।

(९) शरीरका श्रृंगार नहीं करूंगा। मिष्ट पदार्थ और मक्खीका दृष्टांत। सुगंधी फूल और भ्रमरका दृष्टांत। जहां मिठास हो वहां मक्खियां अवश्य जावें उसी प्रकार शरीरको सुशोभित करनेवाले के पास विषयी जीव अवश्य जावे। ये नव वाड सहित ब्रह्मचर्य पालन करना चाहिये और १० वॉ किला है जिसकी सबसे विशेष आवश्यक्ता है।

(१०) मनको रुचे ऐसे विकारी शब्द, रूप, रस, गंध और स्पर्शका भोग न करूंगा तथा उनकी अभिलाषा (इच्छा) भी न करूंगा।

इन दस बोलोंको शास्त्र में दस ब्रह्मचर्यकी समाचारी या दस जातका ब्रह्मचर्य भी कहा है. एक भी वाड तोडने से सात प्रकारकी हानि होती है ऐसा सर्वज्ञ देवने फरमाया है।

(१) शंका-(स्वयं ब्रह्मचर्यमें अस्थिर रहे, पालूं या न पालूं ऐसे भाव उठें, या दूसरे लोग शंका करे कि यह ब्रह्मचर्य व्रत पालता होगा कि नहीं?) (२) कांक्षा-विषयभोगकी इच्छा जगे। (३) वितिगिच्छा-ब्रह्मचर्यसे प्रेम और रुचि घट जाय और उसका अपूर्व फल भूला जाय। ४ भेद हो-भाव ब्रह्मचर्य नाश हो जाय, मन विषयमें दौडने लगे और ऐसे संजोग ढूंढे। (५) उन्माद हो. बुद्धि नष्ट हो जाय हिताहितका विचार न कर शके। जैसे पागल मनुष्य अच्छी वस्तु फेंक देता है और खराब ग्रहण करता है वैसे ही विषयी जीव परम सुखके मूल ब्रह्मचर्यको त्याग अनंत दुःखदाई कामभोगमें सुख समझता है। (६) दीर्घकाल तक दुख दे ऐसे गंभीर और भयंकर रोग प्राप्त हों। इस जन्ममें तो रोग पैदा हो और कदाचित् बच जाय तो पुनर्भवमें तो अनंत रोगमय जन्म प्राप्त हो (७) केवली भगवान परूपित धर्मसे भ्रष्ट हो जाय।

एक वाड तोड़नेसे ये सात हानियां होती है ऐसा श्री प्रभु फरमाते है तो जो अनेक वाड़ तोड़े उनकी क्या दशा हो?

ऐसा समझ नव वाड और दसवें किल्लेद्वारा दृढतापूर्वक आत्म-रक्षा करना जरूरी है। इन दश नियमोंका पूरा पालन नहीं करनेसे आज शुद्ध ब्रह्मचर्य बहुत दुष्कर हो गया है, बालकोंमे विकार, विद्यार्थी विधवा, विधुर और त्यागीओंमें अनेक स्थान गुप्त दोष लगते है, तथा मन कुशील, दृष्टि कुशील, स्वप्न कुशीलसे विरलेहि त्यागी त्यागी बचनेको समर्थ है इन सब दोषोंका कारण ऊपर कही हुई दश समाचारीके पालनमें खामी है.

इन दश बोलोंको दस समाचारी कहते हैं और ये दस प्रकारका ब्रह्मचर्य भी समझा जाता है। जो एक वाड भी तोडता है वह ब्रह्मचर्य तोडता है एसा शास्त्रमें फरमाया गया है. इस लिये मुझे अपने आत्महितके लिये दसो नियम बराबर पालना चाहिये। जिसने शुद्ध ब्रह्मचर्य पालकर अपने आत्मस्वरूपको पहचान लिया है वह संसार समुद्र तर गया है। सिर्फ उसे छोटीसी नदी तरना रह जाती है. और वही सच्चा सुख प्राप्त करता है. इसलिये मैं भी आनंदसे यह व्रत और यह नियम पालूंगा।

## (१७) दिन चर्य्याकी २१ भावनाएँ.

जिस समय जो कार्य करते हों उस समय उससे सम्बन्ध रखनेवाली उत्तम भावनाएं अवश्य भावे । श्री भरत चक्रवर्ती महाराजने ऐसी भावना से ही कर्म के बंधन कम किये थे और विशेष वलवान भावना. मकट होते ही सर्व घाती कर्म क्षयकर अनंत ज्ञान माप्त किया था.

किस समय कैसे विचार करना सो वताते है.

(१) मातःकाल उठकर मल सूत्रकी वाधा दूर करते विचारे कि-शरीर वाधा दूर होकर सुख मालूम होता है उससे अनंत गुना सुख क्रोध, राग, द्वेष, मोहरूपी भाव वाधा दूर करने से माप्त होगा. जिस दिन यह भाव वाधा दूर करूंगा वही दिन धन्य होगा. अशुचि के भडार शरीर परसे मोह हटेगा सव पदार्थोंको मल रूप वनाने वाले शरीर पर से मोह-राग नष्ट होवेगा और इस शरीरसे सत्कर्म करलुंगा तभी सत्य सुख माप्त होगा.

(२) दाँतुन करते-विचारे मुहको साफ करता हूं उसी मकार आत्माको स्वच्छ करूंगा तव वही दिन धन्य होगा. मुख स्वच्छ करते जो आनंद होता है उससे अनंत गुना आनंद आत्माको स्वच्छ करने से होगा.

(३) स्नान करते हुए-शरीरका मैल दूर करता हूं उसी प्रकार क्रोध, मान, कपट, लोभ, विषय, कषाय (क्रोधादि) रूपी आत्माका अंतरंग मैल दूर करूंगा वही दिन धन्य होगा.

दोहा-आत्म ज्ञान वह तीर्थ है, गुणमे और अद्भूत ।
स्नान कर उस तीर्थ मै, त्यागूं मेल अखूट ॥ १ ॥

(४) कपडे पहिनते हुए बिचारे शरीरकी रक्षा और शोभा करता हूं उसी प्रकार आत्माकी रक्षा व्रत-नियमसे और शोभा ज्ञान-ध्यानसे करना श्रेयस्कर है ।

(५) रसोई करते हुए बिचारे शरीर पुष्ट करनेके वास्ते भोजन करता हूं उसी प्रकार आत्माको पुष्ट बनानेके लिये ज्ञानरूपी अमृत भोजनके साधन प्राप्त करना श्रेयस्कर है ।

(६) रसोई में जितना उपयोग जयना ( जीव रक्षा पर लक्ष ) लेती है और अपने हाथसे ही काम करने में जितना पाप घटता है उतना शेठ शेठानी बनकर दुसरोंसे काम करानेसे नहीं घटता. और उलटे पाप ज्यादा बधता है, इसलिये मुझे धिक्कार है. निर्दोष गौचरी करूंगा या जयणासे सब काम अपने हाथसे ही करूंगा और पाप घटाऊँगा. वही दिन धन्य होगाः-

(७) भोजन करते समय-विचारे स्वाद करके खाता हूं, अनेक वस्तु खाता हूं, इसलिये मुझे धिक्कार है. थोडे पदार्थो में स्वाद जीतकर भोजन करना हितकारी है. भूख विना

भोजन करना विषके बराबर अहितकर है। बहुत भूख लगनेपर सादा पथ्य और जरूरत हो उतना भोजन करना आरोग्यताका मूल है।

अजीर्णके छः चिन्ह में से एक भी चिन्ह मालूम होने पर भोजन त्यागनेवाले (उपवास करनेवाले) को कभी दवा नहीं लेनी पडती वह सदा निरोगी और सुखी रहता है तथा दीर्घायु पाता है.

(१) अधोवायु में दुर्गंध (२) माल में दुर्गंध (३) पतली दस्त (४) खराब हुकार (५) भोजन पर अरुचि (६) शरीर भारी या पेट भारी होना। छः अजीर्ण के इन चिन्हकी सदा परीक्षा करके दु खसे बचना चाहिये.

(८) वर्तन साफ करता हूं; उसी प्रकार आत्माके मैलको तप संयमसे शुद्ध करूंगा वही दिन धन्य होगा.

(९) कचरा कडे (कठिन) झाडसे निकालता हूं, इसलिये मुझे धिक्कार है। दुसरोंसे निकलवाता हूं. इसलिये मुझे धिक्कार है. जयनासे कोमल रजोहरणसे कचरा निकालूंगा और आत्मा में भरे हुए क्रोध. मोहरूपी मलीन भाव कचरा ज्ञान ध्यान, तप. संयमसे दुर करूंगा वही दिन धन्य होगा.

(१०) एक जीवन के लिये कमाता हूं उसी प्रकार सदाके लिये पर लोककी खर्ची धर्मरूपी धन इकटा करूंगा वही दिन धन्य होगा.

(११) तिजोरीका धन यहीं रहेगा. सुपात्रको दिया हुवा दान, ज्ञान, उन्नति, और अहिंसा साथ में चलेगी इसलिये धन संग्रह कर खुश होनेकी अपेक्षा उत्तम कार्यों में धन खर्च कर खुश होना श्रेयस्कर है।

(१२) डीब्बी के समान शरीरकी चिंता करता हूं और रत्नके समान चेतनकी रक्षा करना भूल जाता हूं इसलिये मुझे धिक्कार है।

(१३) डिब्बीके समान शरीर दुःखी रोगी होतेही उपाय करताहूं पर रत्न समान चैतनका अज्ञान, क्रोध, लोभ, मोह, विषय रूपी चोर नाश करते है तोभी खुश होता हूं, इसलिये मुझे धिक्कार है।

(१४) पांच इंद्रिय रूपी चोर चेतनका ज्ञान चारित्ररूपी धन लूटते है और काम भोगरूप अग्नि लगाते हुए आत्म धन और आत्म सुखका नाश करते है उन्हें हर्ष से मदद देता हूं, इसलिये मुझे अनंतवार धिक्कार है।

(१५) चेतनको भूलकर परिवार, शरीर, कीर्ति और वैभव में अपना मन मानता हूं यह अज्ञान और मिथ्यात्व नाश होओ और सत्य, ज्ञान और सच्चारित्र प्रकट होओ।

(१६) शरीर सेवा में सब आयुष्य, धन और शक्ति व्यय करता हूं पर आत्महित, कि जो शरीरसे भी अनंत गुना जरूरी है, उसके लिये प्रमाद (आलस्य) करता हूं, इसलिये मुझे धिक्कार है।

(१७) नीचे लिखे हुए मुद्रालेख वडे अक्षरोंमे लिखकर घरमें टाग देवे और वारम्वार पढ़े। सुनिश्चय, गभीरता, मौन, विचारशीलता, निर्भयता, अहिंसा, सत्य, प्रमाणिकता, ब्रह्मचर्य, संतोष, संयम, क्षमा, धैर्य्य, सुपुरुषार्थ, आलस तजो, विचारके बोलो, निंदा त्यागो, गुण देखो, भूल मत छिपाओ. वुरे विचार वेही नरक, शुभ विचार वेही स्वर्ग, विचार परम ज्ञान, सत्संग परम लाभ, संतोष परम धन, समभाव परम सुख, क्रोध समान विष नहीं, क्षमा समान अमृत नहीं, गर्व समान शत्रु नहीं, विनय समान मित्र नहीं, कुशील समान भय नहीं, शील समान निर्भय नहीं, लोभ समान दुःख नहीं, संतोष समान सुख नहीं. अनियमित काम काम नहि है.। फिजूल काम में वखत नहि लगाना उसे अच्छे काम के लिये पूरा वखत मिलता है.

(१८) दिनके चार भाग करके चलूंगा. छः घंटे निंद्रा (सोना), छः घंटे व्यापारादि कामकाजके, छः घंटे शरीर रक्षा और अन्य कार्य, छः घंटे आत्महितके कार्य सत्संग धार्मिक पठन पाठन मनन करना, ध्यान, मौन समाधि आदि इस प्रकार उत्तम गृहस्थ जीवन प्राप्त होओ।

(१९) हमेशां आवश्यकताएं घटाऊ, संयम, त्याग और ज्ञान वढ़ाऊ, एसी शक्ति प्राप्त होओ।

(२०) दान. पुण्य और सुकृतके काम, परोपकार नही है पर ये मेरी आत्मा पर ही उपकार है दूसरोका भला नहीं

पर मेरी खुदकी आत्माका ही भला है और परलोकमें यही मेरे साथ चलेगा। आजतक मैने मिथ्या मोह और अज्ञान के कारण शरीर भोग और परिवारके लिये वुद्धि, शक्ति, और धनका व्यय किया है अब उसमें काट कसरकर सब शक्ति, वुद्धि, और धन सत्कार्य में लगाउगा.

(२१) रातको सोनेके पहिले दिन में किये हुए सब काम यादकर दोष और पापका अंतःकरणसे पश्चात्ताप कर उन्हे दूर करनेका सकल्प करूं और पवित्र काम ज्यादा करूं ऐसी भावना लाउं। एक नोंध (कोपी) रखकर उसमें अपने गुण और दोष लिख लेना और दोष घटानेकी और अधिक चिंता रखना जिससे जीवन में वहुत सुधार होगा। यह भाव प्रतिक्रमण (पापका त्याग) है. और ऐसा करनेसे आत्मा शुद्ध होती है.

पशु पक्षीसे अच्छे वनना हो तो यही मार्ग है। वे मूंगे प्राणी उन्नति मार्ग मे मंद बुद्धि है। और मै मनुष्य तीव्र बुद्धि वाला हूं इसलिये उनसे ज्यादा खराव और ज्यादा अच्छाभी वन सकता हूं. मै अधिक अच्छा वननेकी इच्छा रख प्रयत्न करता रहूँगा

## (१८) व्याहकी इच्छा रखनेवाले और व्याहे हुए पुरुष और स्त्रीकी भावनाएँ।

(१) युवापन समुद्रके तूफान जैसा है, इस पर पूर्ण सयम हे और जीवन जहाज पवित्र रीतिसे पार लग जाय, ऐसा संयम प्राप्त होओ.

(२) पति पत्निका संबंध भोगके लिये नहीं पर नीति और धर्मके प्रत्येक कार्यमें मददगार मित्रके सम्बन्ध के समान समझूंगा.

(३) एक मन अनाज खाते है तव १ सेर लोहू वनता है और एक सेर लोहूका सवा तोला वीर्य होता है. यह वीर्य शरीरका चैतन्य है, वल है, और सुख दिर्घायु, वुद्धि और धर्म मे अमृत समान है इसकी हमेशां रक्षा करूं, ऐसी सद्वुद्धि रहो।

(४) जिस तत्व (वीर्य) की मगज, आंख, कान आदि इंद्रियां और शरीरके अंगोपांगको पोपण करने में वहुत आवश्यक्ता है वह विपय सेवन कर नाश करडालनेकी आत्म घातक प्रवृत्ति पर संयम रहो।

(५) उत्तम संतानकी जरूरके उचित समय के सिवाय मैथुन करना जीवन और सुखका नाश करना है. उसे नीति

शास्त्रवाले व्यभिचार कहते है इससे हमेशा बचूं, ऐसा संयम प्रकट होओ।

(६) गर्भकालमें और बालक तीन वर्षका हो तबतक अखंड ब्रह्मचर्य पालकर अपनी और अपने सतानकी जिंदगी और चारित्रकी रक्षा करू, ऐसी बुद्धि रहो (ऐसे नियम से न रहने से सतान विषयी और रोगी तथा अल्प आयुवाले होते है।

(७) एकवक्त विषय भोग करने से दस दिनकी आयुष्य कम होती है. एक वर्षके विषयसे दस वर्षकी आयुष्य घटती है और जो कदाचित विशेष जीवित रहे तो दुःखमय जीवन व्यतोत करना पडता है, इसलिये अखंड ब्रह्मचर्य पालन करनेकी शक्ति प्राप्त होओ

(८) नॉवेल, डिटेक्टिवकी पुस्तकें, नाटक सिनेमा, वेश्या नृत्य. मसालेदार खुराक, फैशन चाय, और विलासी जीवन से बचना वीर्य राजाकी रक्षा करनेके समान है। सदा "वीर्य" की रक्षा होओ।

(९) जितना जवानी में संयम रह सकता है, उतनी ही दीर्घायु और सुख मिलता है और वृद्धावस्था में अल्प दुःख प्राप्त होते है।

(१०) दम्पत्ति में अलग बिछाने रखूंगा, विषयी चेष्टा तजूंगा और नैतिक, धार्मिक, वार्तालाप करके स्वपर (दोनों) का जीवन सुधारूंगा.

(११) पर स्त्री (पर पुरुष) की इच्छा नरक द्वार है। शरीर, धन, बुद्धि, यश, धर्म और सुगति नाश करनेवाली है। इससे हमेशा बचूंगा ऐसी दृढ प्रतिज्ञा लेता हूं.

(१२) रावण राजा जैसे तीन खंडके स्वामी भी पर स्त्रीकी इच्छा मात्र से राज, वैभव कुल और अपने शरीरका नाश कर बैठे और नरक गति प्राप्त की. तथा आज तक इस पापके लिये उनका अपयश गाया जाता है तो दूसरे साधारण मनुष्यकी कैसी बुरी दशा होगी? ऐसा समझ मै हमेशा के लिये पाप–बुद्धि त्यागता हूं और पवित्र रहनेकी प्रतिज्ञा लेता हूं यह प्रतिज्ञा यह शरीर रहेगा वहां तक पालूंगा।

(१३) जिस प्रकार अग्नि, घी, तेल, और लकड़ीसे नहीं बुझ सकती पर जोरसे वढती है. उसी प्रकार विषयेच्छा भोगसे शांत नहीं होती परन्तु वहुत वढती है. इसलिये भोग पर पूर्ण कावू रखनेका दृढ संकल्प करता हूं।

(१४) जो जलते है ऐसे पदार्थ दूर कर बहुत ज्यादा पानी डालनेसे अग्नि शांत हो जाती है. उसी प्रकार विषयके साधन दुरकर वैराग्यमय विषय पढ़ने, सुनने और मनन करनेसे, कामाग्नि शांत हो जाती है और परम शांत, सच्चा सुख अनुभव होता है वह मुझे प्राप्त होओ।

(१५) पुरुषका २५ वर्ष और स्त्रीकी सोलह वर्षकी उम्र तक मुख्य धातु कच्ची होती है. इस कारण इसके प्रथमका

संयोग अत्यंत हानि करता है। और इसके फल स्वरूप अनेक रोग आ घेरते हैं, शीघ्र वृद्धावस्था आ जाती है, मंद बुद्धि और अल्पायु प्राप्त होता है और संतान भी ऐसीही प्राप्त होती है. जिससे दुगुना दुःख उठाना पडता है. एक अपना और दुसरा संतानका और वंश परंम्परा, देश, जाति तथा समाजको दुःखी बनानेका घोर पाप लगता है, इसलिये इन सब दोषोंसे बचनेका सतत्ः प्रयत्न करना चाहिये।

(१६) पुरुषकी २५ वें और स्त्रीकी १६ वें वर्षकी उम्रमें मुख्य धातु पकती है परंतु उनके शरीर में पूर्ण होनेका समय पुरुषके लिये ४० वां वर्ष और स्त्रीके लिये २५ वां वर्ष है. जो इस आयु तक शुद्ध ब्रह्मचर्य पालते हैं वे दिव्य मनुष्य होते हैं और उनकी संतान महा वीर रत्न होती है. इसलिये इस समय तक मैं ब्रह्मचारी रहूं, ऐसी बुद्धि प्राप्त होओ।

(१७) ज्यों अंडको हिलाने से जीव मृत्यु पा जाता है उसी प्रकार कच्ची उम्र में विषय सेवन करने से शरीर और सुख नष्ट हो जाते हैं. इसलिये मेरे स्वयंके हितार्थ मैं ब्रह्मचर्य पालनेका दृढ संकल्प लेता हूं.

(१८) जवानी में बचाया हुआ पैसा और वीर्य वृद्धावस्था में परम सुखदायक होता है. इसलिये दोनोकी रक्षा करने में तत्परता रहे, ऐसी इच्छा जागृत होओ।

(१९) ब्रह्मचर्य से शरीर, बुद्धि और आत्माकी उन्नति होगी इसलिये शुद्ध ब्रह्मचर्यका पालन होओ.

(२०) विषय सेवन करनेसे शरीर बुद्धि और आत्माका नाश होगा इसलिये विषयवासना नष्ट होओ.

(२१) दुःखका मूल भोगेच्छा शांत होओ.

(२२) सुखका मूल विषय संयम सदा प्राप्त होओ ।

## (१९) व्याहकी इच्छा रखनेवालों और व्याहे हुओंके लिये सुशिक्षा ।

व्याह करना अर्थात् सरजनहार (प्रजा उत्पन्न करनेवाला) का जोखिमी काम सिर पर लेना है । यदि घड़ा बनाने मैं अच्छी मिट्टी और हुन्नर चाहिये तो भला मनुष्य बनाने में कितनी सुयोग्यता होनी चाहिये जो विषय भोगके लिये संयोगकी प्रजा पैदा करते है उनकी प्रजा विषयी रोगी और आलसी होती है. आज महावीर और नर रत्न कम होनेका यही मुख्य कारण है. जो स्त्री पुरुष पूर्ण उम्र तक शुद्ध ब्रह्मचर्य पालते हों और फिर संतान रक्षाके नियम जानते हो तो उनकी संतान अच्छी होती है.

चिकनाई रहित मिट्टी या रेतका घड़ा तुरत फूट जाता है उसी प्रकार कच्चे वीर्य ( छोटी उम्रमें ) या पतले वीर्य-रज (बुढापना बहुत भोग ) से उत्पन्न प्रजा तुरत मर जाती है। आजकल ऐसा बहुत होता है और इसीसे बाल-मृत्यु ज्यादा होती है अथवा कितनी ही जगह कच्चेगर्भभी गिर जाते हैं अर्थात् गर्भस्राव होजाता है।

वैद्य और डाक्टर कहते हैं कि:-आजकलकी हिन्द प्रजा में प्रायः सैकडा ९० टका पुरुष धातु क्षय ( पेशाव आदि में सफेद पदार्थ जाना ) और स्त्री प्रदर ( सफेद पानी जाने ) रोगसे रोगी (ग्रसित) है. इसका कारण विषयी माबाप उनका क्षीण वीर्य विकारी भोजन या गुप्त कटेव है. इन सब दोषोंसे रक्षा करना यह मा-बापका कर्तव्य है. जो वे यह कर्तव्य न पाले तो मा-बाप जन्म दाता नहीं पर अपने अज्ञान और विषय लोलुपतासे प्रजा के नाश (संहार) कर्ता बनते है जिस कामको करना जितनाही कीमती होता है उसमें भूल करनेवाला उतना ही बडा अपराधी होता है।

क्षीण वीर्य, दुर्बल रोगी, अल्प आयुष्यवाली, आलसी, कायर, पुरुषार्थ हीन, विषयी और बहुत ज्यादा गुप्त कटेव वाली प्रजा होनेके कारण:-

(१) पिताका वीर्य और माताका रज शुद्ध और पुष्ट नहीं होता, कारण पिता २५ वर्ष और माता १६ वर्ष तक अखड ब्रह्मचर्य नहीं पालते।

(२) गर्भ रहनेके समय दम्पतिकी भावना विद्वान, सदाचारी, महावीर संतान होनेकी नही रहती, केवल विषय वासनाकी रहती है जिससे प्रजा विषयी बनती है।

(३) गर्भके समय अखंड ब्रह्मचर्य न रखनेसे संतान विषयी होती है, कारण माताकी और गर्भकी नाडी एक होती है जिससे गर्भ भी गुप्त विषय सेवन करता है. माता हंसती है तो गर्भ हंसता है. माता रोती है तो गर्भ भी रोता है. माता दुःखी होती है तो गर्भ भी दुःखी होता है और माता सुखी होती है तो गर्भ भी सुखी होता है. यह धर्म शास्त्रोका फरमान है जो अप्रकट-गुप्त अवश्य होता है। दुधपान के कालमें शुद्ध ब्रह्मचर्य नहि पालनेसे विषयी तत्त्व दुध में मिलते है और बालक शिघ्र विषयी बनते है इस वास्ते खूब ब्रह्मचर्य पालना जरूरी है.

(५) बालक सोते है वहां विषय सेवन करनेसे वे भी कुटेव सीखते है। कोईवार बालक जागते होते है परंतु चुपकी से पडे रहते है. यदि निंद्रामें हो तो भी विषयी वातावरण तो अवश्य बूरी असर करता ही है.

(६) खराब संगति, साथ में सोने तथा एकांत में खेलने से भी किसी २ को कुटेव लग जाती है. जिस प्रकार अंडेको हिलाने से उसमे से जीव विना निकळे ही मर जाता है; उसी प्रकार बालको के कुटेव करते समय वीर्य तो नहीं

निकलता पर पेशावके साथ जाना शुरू हो जाता है इसीको धातु क्षयका रोग कहते है (बालक और कन्याओंकी कुटेव के कारण उनकी बुद्धि, बल, सुख, आयुष्य, पुण्य और धर्मका नाश हो जाता है ऐसा समझ ऐसी कुटेवका जीवन पर्यंत त्याग करनेकी खास हिदायत है) माँ बापको इसके लिये सांप व अग्निसे बचानेकि जितनी सावधानी है उससे हजार गुणी ज्यादा सावधानी रखना जरूरी है.

(७) खराब, विषयी नॉवेलोका पढना, मसाले और खटाईका भोजन, लग्न और भोगी जोडी देखना तथा ऐसी ही वाते करना, गंदी हवामे रहना प्रजाको विषयी और रोगी बनाती हैं ।

(८) ये सब दोष जो त्याग करते है और अपने बालको के लिये अनेक कष्ट और पाप सहकर भी लक्ष्मीका हक देने की जिज्ञासा रखते है वे अगर उन्हे आरोग्य और सदाचारकी सच्ची मिलकियत (पूजी) देवेंगे तो वे मातापिता सच्चे तीर्थ स्वरूप है ।

(९) उपरोक्त सब नियम पालकर बालेकां को खेल भी नैतिक और धार्मिक संसार पडे ऐसे दें और सादे वस्त्र, सादा सात्विक भोजन और अच्छी संगतमें रख सात वर्षकी उम्र में उन्हे विद्यालय (गुरु कुल) में–जंगल में २५ वर्ष तक सुशिक्षा दे तो वह संतान महा वीर, धीर और मनुष्यो में रत्न समान पैदा होती है ।

(१०) पशु, पक्षी, प्रायः संतान काल के सिवाय मैथुन नहीं करते जिससे वे निरोगी और पुष्ट रहते हैं. मनुष्य जो पशु पक्षीके समान भी नीति न पालें तो उनसे भी हलके कहे जाते हैं. अर्थात दम्पतिको संतान कालके सिवाय हमेशां ब्रह्मचारी रहना चाहिये।

(११) प्रत्येक सद्गुण सुख देता है और पुरानी बुरी आदत छोडते शरूआतमें दुःख मालूम होता है परंतु अंतमें वही त्याग परम सुखदायक हो जाता है, इसलिये उपरोक्त सब सद्गुण प्राप्त करना परम हितकारी और सरल है ऐसा समझ उन्हे अंगिकार करना चाहिये.

## (२०) गृहस्थाश्रममें रहनेवालोकी भावनाएँ

(१) शुद्ध ब्रह्मचर्य व्रत धारण करने में असमर्थ आत्माओंको परस्पर धर्म नीति और व्यवहार में मदद देनेवाले योग्य मित्रकी आवश्यकता रहती है और वह मित्र पुरुषकी अपनी स्त्री है और स्त्रीका पति है अर्थात् यह सम्बन्ध सिर्फ भोगके लिये नहीं पर भोग पर संयम रखनेके लिये है. जो वैभव में अच्छी शिक्षा दे और सन्मार्ग पर चलावे तथा विपत्ति में धैर्य दे और आत्म भोग देकर परस्पर सेवा करने में तैयार होवे यह पति पत्नि है, यह खास

ध्यान में रखकर मैं पवित्र गृहस्थाश्रमी बनूंगा। विषय संयम मेरा मुख्य ध्येय रहेगा संतानको बालवय से ही निर्भय, सत्यवादी और क्षमाशील बनाऊंगा.

(१) हाऊ आया, बावा ले जायेंगे आदि शब्द बोलनेसे बालक डरपोक बनता है।

(२) बालकको कुछ कहकर उसे मारदो और 'मत कर' आदि शब्द कह लाड करो तो वह मारना सीखता है। अच्छे गहने कपडे पहिना कर शिणगारने से विलासी तथा शीघ्र विषयी बनता है. खूब, बारंबार अथवा भारी खुराक खिलानेसे बालक रोगी बनता है

(३) मस्तक पर मारने से मगजशक्ति घटती है और तमाचा मारने से "एडीशन" जैसे भी जीवन पर्यंत बहरे बनते हैं. बालकको कभी नहीं मारना चाहिये. शांति, प्रेम, और युक्तिसे सदाचारी बनाना चाहिये.

(४) खोज गया हिंडोळा, गड, मँगता आदि शब्द बोलनेसे बालक गाली देना सीखता है।

(५) बालकको आवश्यकतासे ज्यादा धाक में रखनेसे उसकी प्रत्येक विकास पाती हुई शक्तियाँ घटती हैं. और वह बचने के लिये झूठ और कपट (बनावटी बाते बनाना) सीखता है।

(६) सच्चारित्र रहित नौकरसे बालक पलाया जाय तो वह बच्चेको रोनेसे चुप रखने के लिये वह उसका गुप्त

भाग पंपोल कर बालकके लिये महा भयंकर हानि करता है या अन्य दूसरी कुटेव सिखाता है, इसलिये बालकको हमेशां अच्छी संगत में रखना चाहिये.

(७) बालगोली, बालामृत या कोईभी बाल औषध पिलानेकी आदत न डालें. कारण शरीरकी प्रकृति दवा के वश हो जाती है. अधिक और अच्छे २ पदार्थ खिलाने से रोग बढता है ; मिथ्या प्यार करना उसका शत्रु बनना है आदि संतान पालने और सुधारनेकी पुस्तकें पढ ज्ञान तथा अनुभव प्राप्त कर गृहस्थाश्रम प्रमाणिक रीतिसे चलाऊंगा । (पूर्ण ज्ञान प्राप्त करनेवालाही प्रमाणिक बन सक्ता है)

३ परिवार और संतानकी सेवा कर उन्हें धर्म में लाना मैं मेरी जरूरी फर्ज समझूंगा. ।

४ क्षमा से ही सब कार्य सिद्ध होते हैं । क्रोधसे सुधरा हुआ सब कार्य बिगड़ जाता है । ज्ञान तथा बुद्धि नष्ट हो जाती है । और सुख के संयोग भी दुःख रूप बन जाते है, इसलिये हमेशा मैं क्रोधको छोडूंगा । क्रोधी आदतसे मित्र भी शत्रु हो जाते है, क्रोधी मनुष्यसे कोई काम पूर्ण सफल होना कठिन है कारण वह कष्ट सहन मैं क्षमा नहिं रख सकता तथा उसके शत्रु बहुत होते हैं.

५ मैं हमेशां कुटुम्ब-क्लेश सहनशीलता से दूर कर सम्प और सुलह कराऊंगा । संप-शांतिसे दिव्य सुख है ।

इसके धनकी जरूरत नहि है केवल क्षमा और गुणा-
नुराग चाहिये.

६ पतिको भोगका आनंद देना अपना कर्तव्य समझनेवाली स्त्री राक्षसी के समान है और पति तथा अपने सौभाग्य का नाश करनेवाली है. इसी प्रकार जो पुरुष अपनी स्त्रीको विषयका साधन समझता है वह राक्षसके समान है। वह अपना खुदका. स्त्रीका और संतानका नाश करनेवाला है इस पापसे मै दृढता पूर्वक बचूगा.

७ शरीरकी शोभा दूसरोंको बताना पाप है।

८ जीवन पर्यंत सदाचारी रहूंगा और हमेशां नीची दृष्टि रख विकार रहित चलूंगा. पर स्त्री (पुरुष) को देखनेसे ही विकार जगता है। यह दृष्टिकुशील है। मनके कुविचार मनकुशील है.

९ घरके प्रत्येक मनुष्यको अच्छी शिक्षा दे. नीतिवान और धर्मी बनानेका कर्तव्य पालन करूंगा. मेरी ऐसी हमेशां सद्बुद्धि रहे।

१० परिवार, संतान और सेवकको सुशिक्षा तथा सदाचारकी पूंजी और पुरःस्कार दूंगा क्योंकि येही उसे सुखी करेंगे।

११ ज्ञान प्रचार और परमार्थके लिये सर्व शक्ति और धन हमेशां दूंगा क्योंकि यही मेरा है और शेष दूसरोंका है सत्कर्म मै खर्चा हुआ धन पुण्यरूपसे साथ चलेगा

कमसेकम पेदाशका चौथा हिस्सा पवित्र कामों में अवश्य लगाऊंगा.

१२ गृहस्थाश्रमका मुख्य धर्म अतिथि सत्कार और अन्नदान औषधदान, वस्त्रदान, और विद्यादान है मैं चारों प्रकारका दान उचित रीतिसे करूंगा. और विद्यादान सर्वोत्तम समझ उसपर विशेष लक्ष्य लगाऊंगा.

१३ जिस प्रकार कमळ कीचड में रहकर भी स्वयंकीच से अलग रहता है और कीचसे सुगंधी तत्व खींच आप सुगंधवाला बनता है उसी प्रकारमैं भी संसारमें रहकर हिंसा, असत्य, विषय, क्रोध, मोहसे बचूंगा और दान धर्मादि शुभ तत्त्वोंका लाभ लूंगा.

(१४) जिंदगीके चार भाग कर एक भाग विद्या सीखनेमें, ब्रह्मचर्याश्रम में, एक भाग गृहस्थाश्रम में, एक भाग ब्रह्मचर्य सहित त्यागीके गुणोका अभ्यास करने में या साधु जीवनमें अभ्यास और अनुभव ज्ञान प्राप्त करनेमें और एक भाग सब प्रवृत्ति त्याग उत्कृष्ट आत्म ध्यानमें विचरने में लगाऊंगा और यह कर्तव्य हमेशा याद रखूंगा.

# (२१) व्योपारीकी भावनाएँ.

(१) द्रव्य, धन, प्राप्त करनेके लिये मै दुकान खोलता हूं; उसी प्रकार धर्म धन कमानेकी इच्छाकर धर्मकी दुकान खोलूंगा वही दिन धन्य होगा

(२) द्रव्य मालका लेनादेना करता हूं उसी प्रकार भाव माल ज्ञान, दर्शन, चारित्र लूंगा दूंगा वही दिन धन्य होगा.

(३) व्यापार में सत्य, निष्कपटता प्रमाणिकताका, पूर्ण पालन करूंगा, और धर्म व्यापार करनेका सामर्थ्य प्राप्त करूंगा.

(४) जमा खर्च करके संसारका हिसाब लगाया जाता है इसी प्रकार पुण्य पापका हिसाब रोजरोज तपास कर पाप त्यागूंगा वही दीन धन्य होगा

(५) द्रव्य मालकी दलाली करता हूं उसी प्रकार धर्मकी दलाली करूंगा वही दिन धन्य होगा दलालीमें सदा सत्यका पालन होओ.

(६) व्यापारका अर्थ दुसरोंकि मुश्किल दुर करना है. जो चीज जिस समय चाहिये वह आसानीसे पूरी करे सो व्यापारी है मै थोडे नफे मै नीति, सत्य और इमानदारी से ही व्यापार करूंगा.

(७) धन संग्रह करे सो लुटेरा है। धन बांटे, सबको देथे सो व्यापारी है। मै लुटेरा नहिं बनुंगा परंतु धन आवेगा सो दानवीर कार्नेगीके समान ( पंदरह क्रोड पाउंड कमाया सो सब निर्वाह खर्चके सिवाय दान दिया ) मै भी दान दुंगा.

(८) देश जाति और धर्मको हानि पहूचानेवाली वस्तुओंका वैपार आडत व दलाली कभी नहीं करूंगा. विंदु झुठ सुखके लिये इस लोक और पर लोकका समुद्र जितने दु ख नहीं उठाउंगा.

(९) शास्त्रमे प्रायः सदुपदेश सुननेके बाद सबहि उत्तम मोक्षाभिलाषी श्रोताओं (श्रावकों) ने नया धन व नये भोग नहीं बढाते तथा हमेशां घटानेकि प्रतिज्ञा ली है। मैं भी अब धन और भोग जो भयंकर भावरोग है घटाउंगा. आरंभ (हिंसा) और परिग्रह निश्चयसे दुःख दुर्गुण और दुर्गतिके बढाने वाले है।

## (२२) समाज संचालकोकी भावनाएँ.

(१) राजा बादशाह, व्हॉयसरोय, गवर्नर, ए. जी. जी. कलेक्टर, ठाकुर, जागीरदार रईस सूबा, तहसीलदार आदि उनहे प्रजाकी सेवा स्वीकार करनेके पद अर्थात् दीक्षा है.

प्रजा अपने उपकारकके सर्व कुछ देनेको कृतज्ञतासे तैयार रहती है. इस नीतिका दुरुपयोग कर मै खूब धन संचय करना तथा विषय विलासी बनना और प्रजाके दुःखको दूर नहीं करना ऐसा अनीतिमय काम करता हूं. सो धिकार है। इन सब दोषोंसे मुझेही गंभीर दुःख उठाने पडेगें इसलिये मै उन्हे सर्वथा त्यागूं यही भावना

केवळ जीवन निर्वाहके लिये जरूरी वस्तुएँ लेकर प्रजाकी उन्नतिमे हमेशा सब आमदनी दे देना तथा जरूरत पडे तो अपनी देह भी अर्पण करना चाहिये। यह मेरा कर्तव्य (धर्म) सदा जागृत रहो.

(२) वकील, बॅरीस्टर, सॉलीसीटर, एडव्होकेट आदि धंधे समाजके कुसप, कलह और झगडे मिटानेके लिये है. जो मनुष्य अज्ञान, अहंकार, इर्षा और धनलोभ, के वश परस्पर लडकर विनाश पाते है उनको शांतिसे हेतु तथा प्रमाण देकर भूल समझाना और सत्य तथा न्याय में सेवा भावसे स्थिर करना मेरा कर्तव्य है। आज ये धंधे केवल खूब धन कमाना, विलास भोगना और तीक्षण बुद्धिरूपी शास्त्रसे निश्चय में निजकी आत्माकी घात करना और प्रकट में प्रतिवादीको हराना है। कलह कुसंप-भाव-हिंसा है। भाव हिंसा मेटनेका परम पवित्र कर्तव्य भूलकर उसी शक्तिसे घोर भाव-हिंसा बढ़ाता हूँ सो धिकार है.

(३) मुन्सिफ, न्यायाधीश, पंच, आदि धंधे सत्य प्राप्त करानें में मददगार है। यदि लोभ वश अथवा विना अनुभव से किसीको हानि पहूँचाता हूँ तो धिक्कार है। मैं सत्य न्याय देनेकी कोशिश करूंगा.

(४) वैद्य, हकीम. डॉक्टर, वगेरे धंधे प्रजाको बीमारी न आवे ऐसी हंमेशा शिक्षा देनेके लिये है तथा कोई आरोग्यके नियमोंको भूले और बिमार पडे उन्हें सेवा भावसे निरोग बनानेके लिये है। अब मैंने इसके द्वारा धन कमाना शरू कर दिया सो धिक्कार है। अब मैं हंमेशा मेरे पवित्र धर्मका पालन करनेकी कोशिश करूंगा.

शिक्षा—आज हजारों दवा खाने खुलते है करोडों रुपये दवा मे नाश होते हैं। दवासे लाभ थोडा और शारीरिक तथा आत्मिक दोनों हानि ज्यादा है. रोग हंमेशा बढते है. यदि अब भी आरोग्य सुख सबको देना हो तो शफाखानें या औषधालयों में जो रकम खर्च होती है उससे ज्यादा या उतनी नहोतो कमसेकम आधी रकम नीचे लिखी शैलीसे खर्च करना जरूरी है. प्रिय पाठकगण ! आप शफाखानेंके सचालक हो तो इस मुजब वर्ताव करें यदि नहो तो जो सचालक हों उन महाशयोंकी सेवामें जाकर यह शैली चालू करनेकी नम्र विनती करें.

(१) आरोग्य शिक्षादायी साहित्य प्रचार करना तथा शरीर शास्त्रके ज्ञाता ( जानकार ) प्रतिभाशाली, भाषण

चतुर देशके ऐसे स्त्री व पुरुष डाक्टर, रखकर हमेशां शफा-खानेंमैं बाजारमें, व मोहल्लेमें भाषण दिलावें और हर प्रकारके रोगसे समाजको बचावें. इससे जो आज दवाका खर्च है वह बहुत घट जायगा व रोग एकदम घट जायेंगे आरोग्य बढेगा। इस शैलीको नाहीं धारण करनेसे आज औषधालय बढते है और रोगी भी बढ रहे है. " Prevention is better than cure " रोग होकर आराम करनेके स्थान मे रोग पैदाही न हो वैसा करना ज्यादा अच्छा है.

(५) नोकरी करनेवालें विचारे कि मै यह नोकरी धन संचय, मान वडाई या हुकूमतके लिये नाहीं करता परंतु समाज रूपी महातंत्र चलाने में अनेक सहायक चाहिये जिसमें मै भी एक छोटा सेवक हूं। हिनपत समझना काम चित्तलगाके नहीं करना, खुद योग्य न होते हुवे वह काम करनेको जिम्मेवार होना, इर्षा करना विगैरे अपराध द्वारा स्व-पर हानि करता हूं सो धिक्कार है अब मै एसे सब दोषोंको अवश्य छोडूंगा.

(६) जगत मै चारवर्ण सर्वस्थाने हैं। ज्ञान विवेक बुद्धि धरे धरावे ( पढे पढावे ) सो ब्राह्मण, पुरुषार्थ प्रेमी न्याय रक्षक सो क्षत्रिय। जरूरी वस्तु अन्न वस्त्रादि उत्पन्न करे तथा व्यवस्था पूर्वक सेवा भावसे सबको पहुचावे सो वैश्य। शुद्ध भावसें सेवा करे सो शुद्र है।

शरीर में मगज बुद्धि सो ब्राह्मण है। भुजा वीरता सो क्षत्रिय है, पेटमें जठराग्नि असार (मल) को दूरकर सार वस्तु (धातुएँ) खींच सब इंद्रियोको पहूंचावें सो वैश्य और पग सो शुद्र (सेवक) है यदि पेट सारी वस्तु खींचकर इतरोंको न पहूचा वै और अपने पास रक्खै तो वह सुख नाहीं परंतु जलोदर रोगके दुःखसे महा दु खी होता है. इस प्रकार मै व्यापारी बनकर धन संचय कर पासही रक्खू तो जलोदरके रोग समान दुःखी होऊंगा और कुटुंबके झगड़े, कोर्ट, वकील वैरिस्टर, चोर, अकस्मात् अथवा मोत-रूपी चीर फाड (ओपरेशन) के दूःख भोगने पडेंगे यदि झूठ, कपट, अनीति, अन्यायरूपी मलको त्यागकर, सत्य, न्याय, नीति युक्त पुरुषार्थसे कमाया हुआ धन (सार) एकत्रकर जगतकी उन्नति में दूंगा तोही निरोगी सुखी रहूंगा, ऐसा कर्तव्य सदा जाग्रत रहो। जहां जठराग्नि निर्दोष है वहां सब इंद्रियों और शरीर पुष्ट तथा निरोग है। इसी प्रकार व्यापारी वर्ग नीतिवान पुरुपार्थी पूर्व पश्चात् समाजके हितकी रक्षा पूर्वक व्यौपार करते है व संचित शक्ति समाजको अर्पण करतें है वहां ही सारा शरीर रूपी समाज सुखी रहता है, वह मनुष्य लोक भी देवलोक तुल्य होता है इसलिये मै सच्चा व्यौपारी बनूंगा।

## (२३) विधवा और विधुरके लिये भावनाएँ.

(१) मैं सुखी हूं पति पत्निका सयोंग आजकल प्रायः भोगके हेतु होता है । इससे वचना ही धर्म है.

(२) परमात्मा बननेका मुख्य गुण--ब्रह्मचर्य मुझे प्राप्त हुआ है । यह तीनो लोकके सुखसे विशेष सुख दाता है. जिससे यह मेरा जीवन दुःखमय न मानते मैं सुखी समझता हूँ

(३) एकांत में स्त्री पुरुषका समागम, वातचीत, पौष्टिक या मसालेदार खुराक, शरीर, शृंगार, विलासी प्रसंग, नाटक या सिनेमा, वैश्या नृत्य देखना, उपन्यासादि पढना और विषय बढे ऐसे सब अवसरोको मै हमेशा त्यागुंगा.

(४) धार्मीक वैराग्यसे भरी हुइ पुस्तके पढूंगा । सेवा-भाव, सत्संग, त्याग, और, संयम येही मोक्षके कारण है. इन्हे धारणकरनेकी मुझमे शक्ति बढ़े और येही मेरे सदा सहायक हो.

(५) चिंता, शोक, भय और विषयेच्छा, हमेशाके लिये नष्ट होओ ।

(६) धैर्य, सत्य, ब्रह्मचर्य, सहित सादा और संयमी जीवन हमेशा रखूगा

(७) मनुष्य जन्म धर्मसेही सफल होता है और वही धर्म पालन करनेके मुझे सब उत्तम संयोग प्राप्त है जिससे मैं यह मोका न चूक अपना जन्म सफल करूंगा.

# (२४) रोगी अवस्थासे निरोगी और सुखी बननेकी भावनाएँ.

( क्षय आदि अनेक भयंकर जूने रोग ऐसी भावना से दूर हो गए है प्रत्येक भावना हमेशां वारंवार रोगी पढे अथवा उसकी सेवा चाकरी करनेवालोको रोगीको सम्बोधित कर कहना चाहिये )

(१) मैं निरोगी हूं. मुझे विलकुल रोग नही है मेरे सब रोग दूर हो रहे है। स्नायु बराबर काम दे रहे है। मुझे बराबर भूख लगती है. अच्छी तरह पचता भी है. मेरे मनको दुर्बलतासे मुझे वेदना मालूम होती है और वेदनाके विचार से ही मैं रोगी बना हूं. अब रोग के विचार दूर करनेसे मैं निरोगी बनूंगा।

(२) मेरा मस्तक दुखना दूर हो रहा है मुझे अब शिरमें दुःख नहीं मालूम होता। मगज शांत है। और अच्छे विचार कर सक्ता हूं। मेरी आंखोकी वेदना मिटती जाती है, अब आंखे निरोग है. मेरी आखे अच्छी पुस्तके पढने जीवोको देखकर रक्षा करने तथा महा पुरुषो के दर्शने के लिये तैयार है. कानका रोग मिटता जाता है। अब कान शुद्ध है और धर्म वचन सुनना चाहते हैं। नाकका रोग मिटता

जाता है और शुद्ध हवा ले सकता है। जीभ और मुंह के रोग मिटते जाते है वे अब निरोग है प्रिय, सत्य और हितकर, विचार पूर्वक, उपयोगी वचन बोल सकते है. सादा और पथ्य भोजन रुचि से खा सकता हूं। शरीरकी समस्त वेदनाएं दूर हो रही है. मै अब पूर्ण निरोगी हूं। शरीर को गर्मी आदि सब संयोग आरोग्यवर्द्धक मालूम होते है और तन्दुरुस्त बनाते है. हृदयमें खून बराबर साफ होता है और बराबर चलता रहता है. मन पवित्र व शांत है और शुभ विचार कर सकता है।

(२) शास्त्र में भगवान् फरमाते है कि छः कायके जीवो को मन, वचन, काया से दुख देने से दुःख मिलता है और ऐसेही दुःखदायी संयोग प्राप्त होते है और दुःख न देनेसे तथा दुःख दूर करनेसे सुख मिलता है और सुखदायी संयोग प्राप्त होते है। १ हिंसा २ असत्य ३ अप्रमाणिकता ४ विषयभोग ५ धन मोह ६ क्रोध ७ मान ८ कपट ९ लोभ १० राग ११ द्वेष १२ कुसम्प (क्लेश) १३ कलक देना १४ चुगली खाना १५ पर निंदा १६ हर्ष शोक १७ कपटसे झूठ बोलना १८ और प्रतिकूल समझ अर्थात् मिथ्यात्व अज्ञान ये अठारह पाप मन वचन कायासे सेवन करनेसे, सेवन कराने से या करनेवालेको भला समझने से तीव्र दुःख और घोर अशातावेदनी (कर्कश वेदना) प्राप्त होती है और

अठारह पापका मन, वचन, काया द्वारा त्याग करने से अतिशय निर्मल सुख ( साता वेदनी ) मिलती है और आत्म ध्यान से अव्याबाध—वेदना रहित सुख प्राप्त होता है।

(४) शरीर पुद्गल है, जड पदार्थ है, रोग शरीर पर असर कर सकता है परंतु आत्माको कुछ भी हानि नहीं पहूंचा सकता। कारण आत्मा अरुपि, अरोगी अजर, और अमर है. शरीर—मोह दूर करने से सच्चा सुख प्राप्त होता है।

दोहाः—रोग पीडता देहका, नहीं जीवको खासः
घर वळे अग्नि थकी, नहि घरका आकाश ॥

ऐसा विचार कर चिंता शोक भय रहित मै परमानद प्राप्त करुंगा.

(५) अशाता वेदनी, पूर्व कृत पाप कर्मका नाश करती है। वह उपकारी है। पाप न करनेकी शिक्षा देती है। में भी अब सब पाप दोषको त्याग दूंगा।

(६) रोग में चिंता, भय, शोक करने से रोग अधिक वढ़ता है और नये कर्म बंध जाते है जिस से भविष्य में भी बहुत दुःख उठाना पडता है। रोगको दूर करने के लिये अत्यंत पाप से बनी हुई दवा का सेवन करना पडता है जिससे भी पाप बढ़ता है और उसके फल स्वरूप विशेष दुःख प्राप्त होते है. मै पापिष्ट विचार नहीं करुंगा। व हिंसावाली दवाई नहीं लूंगा.

(७) दवा लेने से प्रायः एक रोग मिटता है तो दुसरे अनेक रोग आ घेरते हैं। आजकल दवाओंका प्रचार अधिक है तो रोग भी बढ़े है। सौ रोगी मे दवा लेनेवाले प्रायः ९० टका दुःखी दुःखी होकर मरते है और दवा न लेनेवाले सैंकड़ा १० टका मरते है. उपवास, तपश्चर्या, ब्रह्मचर्य, पांच इंद्री वश करना, खूब भूख लगे तब सादा पथ्य तन्दुरुस्त प्रमाण, भोजन करना और क्रोधादि त्याग करने से प्रायः १०० रोगी में से ९९ रोगी सुधर जाते है. परिवार, कुटुम्ब चिंता, रोग का भय, और गभराट से रोग बढ़ता है इसलिये उनसे बचना चाहिये। रोग जहरीले तत्त्व वहार निकाल कर शरीर शुद्ध बनानेकी कुदरती है क्रिया है दवासे जहर पीछा ढांकनेसे ज्यादा रोग बढाना है।

(८) शरीरके ममत्वसे शरीर पीछा धारण करना पडता और वहुनसे दुख उठाने पडते है. शरीरको सचारित्र में ा निर्मोही वनने से अशरीरी वन अनंत सुख प्राप्त कर है. यही परम सुखदाई सिद्धावस्था है।

(९) मै अरोगी हूं, अभोगी हूं, अशरीरी हूं, अक्रोधी हूं, अमानी हूं, अलोभी हूं, निर्मोही हूं, तथा अनंत केवल ज्ञान, केवल दर्शन, अनंत आत्मिक सुख, अनंत आत्म शक्ति संयुक्त हूं. ऐसे मेरे स्वयं के शुद्ध गुण है वे मुझे प्राप्त होओ.

समाप्त.
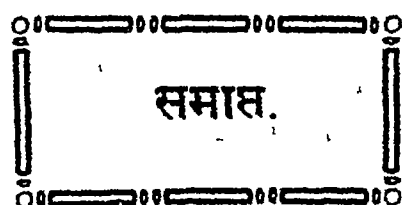
शुद्ध तत्व लिया है तथापि भूल होवे तो सुधार लेवें व प्रकाशकको विदित करें।

(७) सब कार्य प्रथम भावनामय होकर बाद कर्तव्यरूप परिणमते है जो सदा शुभ भावना होवेगी तो सदा शुभ कर्तव्य व शुभ फल हि मिलेंगे इसलिये इस आत्मजागृति भावनाको नित्यनियम मैं वांचन मनन करनेकी नम्र प्रार्थना है.

(८) जगतमै सुखी रहना हो तो अपने गुण व दूसरोंके दोषोंको भूल जाओ और अपने दोष व दूसरोंके गुणोंको प्रगट करो शुद्ध भावकी यह क्रिया इसलोक व परलोकमें मोक्ष (सच्चा सुख) देवेगी.

(९) पढना सो भोजन करना है। मनन करना सो पचाना है। चारित्रमैं लाना सो धातु उपधातु बनाकर शरीर पुष्ट करनेतुल्य आत्म सामर्थ्य प्रगटाना है.

अमदाबाद व कलोलमें पुस्तक

छपानेका पता—

**श्री जैन सस्तुसाहित्य प्रचारक कार्यालय—कलोल.**

**संघवी वाडीलाल काकुभाइ.**

मारंगपुर, तळीयानी पोळ—अमदावाद.

# ज्ञान दानका प्रभाव.

उत्तम (सम्यक्) ज्ञानका दान वही भाव चक्षुका दान है। उत्तम ज्ञानका दान वही भाव अभयदान है। कारण अच्छी शिक्षासे सदाचारी बनकर जन्म मरणसे छूट जाते हैं इससे अनंत भवका अभयदान होता है। दूसरी चीजोंका दान देनेसे लेनेवालेको थोडी उपरकी शांति व देनेवालेको थोडा पुण्य सुख होता है परंतु उत्तम ज्ञान देनेवाला व लेनेवाला ज्ञान आराधना करके सच्चारित्र द्वारा अनंत जन्म, मरण, रोग, शोक, और भयके दुःखोंसे छूटकर अनंत सुखमय मोक्षपदकी प्राप्ति करता है। सम्यग् ज्ञान दान ही सर्वोत्कृष्ट दान है। अन्नदानसे एक दिनकी भूख मीटती है. औषधदानसे थोडे दिनके लिये रोग शांत होता है. अभयदानसे एक जन्ममें थोडे समयके लिये मरणभय दूर होता है, परंतु उत्तम ज्ञानके दानसे सब दुर्गुण छूटकर अनंत जन्म मरणके दुःखो से बच सकते हैं इसलिये उत्तम (सम्यक्) ज्ञानका दान श्रेष्ट है। गृहस्थ लोक चारों हि, प्रकारका दान हेमशा देते है. तथापि ज्ञान दानमें उत्कृष्ठ भाव बताते हैं। जिस ज्ञानसे हिंसा, झूठ, बेइमानी, विषयवासना, तृष्णा, क्रोध, गर्व, कपट, लोभ, कलह, निंदा, घटे सो उत्तम (सम्यक्) ज्ञान समझना चाहिये. और जिस विद्यासे हिंसादि कोइ एक या अनेक दोष बढे व कुज्ञान समझना चाहिये. इसलिये सुज्ञान कुज्ञानकी परीक्षा करके हमेशां सुज्ञानकी वृद्धिमें तन, मन, धन, बुद्धि, शक्ति अर्पण करना चाहिये जिससे स्व-पर कल्याण होवे। हरेक पाठशाळा, स्कूल, विद्यालय, बोर्डिंग गुरुकुळ, व कोलेजमें नैतिक, व धार्मिक, शिक्षा अवश्य पढाना चाहिये। आज इस नियमका पालन थोडा होनेसे पढे हुए विरल विद्वान ही देश, समाज व धर्मकी सेवा करते हैं व उच्च चारित्रशाली भी कम है। अब सावधानीसे उत्तम नीति व सदाचारके संस्कार डालेंगे तो उत्तम भविष्य देखेंगे।